SHRI VINOD PUSTAK MANDIR

समाज, शिक्षा और पाठ्यचर्या की समझ

(UNDERSTANDING OF SOCIETY, EDUCATION AND CURRICULUM)

डॉ. नेत्रा रावणकर

समाज, शिक्षा और पाठ्यचर्या की समझ

[UNDERSTANDING OF SOCIETY, EDUCATION AND CURRICULUM]

[डी.एल.एड. (बिहार) के नवीनतम् पाठ्यक्रमानुसार]

लेखक

डॉ. नेत्रा रावणकर

एम. ए. (मराठी, हिन्दी, दर्शनशास्त्र, मनोविज्ञान)
एम. एड., पी-एच. डी. (मराठी, शिक्षा)
डिप्लोमा इन योगा, डिप्लोमा इन स्कूल काउन्सलिंग
प्राचार्य, निर्मला कॉलेज ऑफ एजुकेशन
उज्जैन (म. प्र.)

श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा-2

Publishers **:**
Shri Vinod Pustak Mandir
Corporate Office : Plot No. 4, Mauja Kakretha,
Near Foot On Shoes,
Sikandra, Agra
Branch Office : 11/7, Dr. Rangeya Raghava Marg, Agra-2
Tel. : 91-0562-2855187, 91-0562-2855179

© All Rights Reserved

First Edition : 2020

Laser Typesetting :
Radial Graphics, Agra-2

Printed By **:**
B. P. Printers, Agra-3

ISBN-978-81-7457-229-5

Price **: ₹ 120.00**

All rights reserved. No part of this work may be reproduced, transcribed or used in any form or by any means—graphic, electronic, or mechanical, including photocopying, recording, taping, Web distribution, or information storage and/or retrieval systems—without the prior written permission of the publisher.

भूमिका

'समाज, शिक्षा और पाठ्यचर्या की समझ' पुस्तक बिहार के डी. एल. एड. प्रथम वर्ष के नवीनतम् पाठ्यक्रमानुसार लिखी गई है। पुस्तक लेखन में प्रयास किया गया है कि प्रस्तावित पाठ्यक्रम के सभी बिन्दुओं पर चर्चा हो, जिससे छात्रों को विषय-वस्तु के लिए अन्यत्र न जाना पड़े। सम्पूर्ण पाठ्य-सामग्री एक ही स्थान पर उपलब्ध कराने का पूर्ण प्रयत्न किया गया है।

पुस्तक की सम्पूर्ण विषय-वस्तु अत्यन्त ही सरल तथा बोधगम्य भाषा-शैली में सुधि पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत है।

पुस्तक में अध्यायीकरण प्रस्तावित पाठ्यक्रम के अनुरूप रखा गया है, जिससे पाठकों को पाठ्यक्रमानुसार अध्ययन करने में सुविधा रहे। आशा है, पुस्तक डी. एल. एड. के छात्र/छात्राओं को उपयोगी लगेगी। पुस्तक के भावी संस्करणों में सुधार हेतु पाठकों के मूल्यवान एवं उपयोगी सुझाव सदैव आमन्त्रित हैं।

पुस्तक को इतने कम समय में, कम कीमत पर तथा इतने सुन्दर रूप में पाठकों के हाथों प्रस्तुत करने का श्रेय **श्री विनोद पुस्तक मन्दिर** के संस्थापक **श्री राजीव अग्रवाल जी** को जाता है।

—लेखक

पाठ्यक्रम
(Syllabus)

इकाई 1 : बच्चे, बचपन और समाज

- बच्चे तथा बचपन : सामाजिक, सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक समझ।
- समाजीकरण की समझ : अवधारणा, कारक तथा विविध सन्दर्भ।
- बच्चों का समाजीकरण : माता-पिता, परिवार, पड़ोस, जेण्डर एवं समुदाय की भूमिका।
- बाल अधिकारों का सन्दर्भ : उपेक्षित वर्गों से आने वाले बच्चों पर विशेष चर्चा के साथ।

इकाई 2 : विद्यालय और समाजीकरण

- शिक्षा, विद्यालय और समाज : अन्तर्सम्बन्धों की समझ।
- विद्यालय में समाजीकरण की प्रक्रिया : विभिन्न कारकों की भूमिका व प्रभावों की समझ।
- शिक्षा, शिक्षण तथा विद्यालय : सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक व राजनीतिक आधार।

इकाई 3 : शिक्षा और ज्ञान : विविध परिप्रेक्ष्य की समझ

- शिक्षा : सामान्य अवधारणा, उद्देश्य एवं विद्यालयी शिक्षा की प्रकृति।
- शिक्षा को समझने के विभिन्न आधार/दृष्टिकोण : दर्शनशास्त्रीय, मनोवैज्ञानिक, समाज-शास्त्रीय शिक्ष का साहित्य, शिक्षा का इतिहास आदि।
- ज्ञान की अवधारणा : दार्शनिक परिप्रेक्ष्य।
- ज्ञान के विविध स्वरूप एवं अर्जन के तरीके।

इकाई 4 : प्रमुख चिन्तकों के मौलिक लेखन की शिक्षाशास्त्रीय समझ

- महात्मा गाँधी—हिन्द स्वराज : सामाजिक दर्शन और शिक्षा के सम्बन्ध को रेखांकित करते हुए।
- गिजुभाई बधेका—दिवास्वप्न : शिक्षा में प्रयोग के विचार को रेखांकित करते हुए।
- रवीन्द्रनाथ टैगोर—शिक्षा : सीखने में स्वतन्त्रता एवं स्वायत्तता की भूमिका को रेखांकित करते हुए।
- मारिया माण्टेसरी—ग्रहणशील मन पुस्तक से 'विकास के क्रम' शीर्षक अध्याय : बच्चों के सीखने के सम्बन्ध में विशेष पद्धति को रेखांकित करते हुए।
- ज्योतिबा फुले—हण्टर आयोग (1882) को दिया गया बयान : शैक्षिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक असमानता को रेखांकित करते हुए।
- डॉ. जाकिर हुसैन—शैक्षिक लेख : बालकेन्द्रित शिक्षा के महत्व को रेखांकित करते हुए।
- जे. कृष्णमूर्ति—'शिक्षा क्या है' : सीखने-सिखाने में संवाद की भूमिका को रेखांकित करते हुए।
- जॉन डीवी—शिक्षा और लोकतन्त्र से 'जीवन की आवश्यकता के रूप में शिक्षा' शीर्षक लेख : शिक्षा और समाज की अन्तर्क्रिया को रेखांकित करते हुए।

इकाई 5 : पाठ्यचर्या की समझ : बच्चों तथा समाज के सन्दर्भ में

- पाठ्यचर्या तथा पाठ्यक्रम : अवधारणा तथा विविध आधार।
- बच्चों की पाठ्य-पुस्तकें : शिक्षा, ज्ञान एवं समाजीकरण के माध्यम के तौर पर।
- स्थानीय पाठ्यचर्या की समझ।

●

विषय-सूची

अध्याय क्रमांक **पृष्ठ क्रमांक**

इकाई—1
बच्चे, बचपन और समाज
(Children, Childhood and Society)

1. बचपन तथा बच्चे **1–21**
[CHILDREN AND CHILDHOOD]

- बच्चे तथा बचपन : सामाजिक, सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक समझ (Children and Childhood : Social, Cultural and Historical Understanding) 1
- बच्चे तथा बचपन : सामाजिक समझ (Children and Childhood : Social Understanding) 2
- बच्चे तथा बचपन : सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक समझ (Children and Childhood : Cultural and Historical Understanding) 3
- बचपन के विकासात्मक चरण (Developmental Steps of Childhood) 4
- बचपन का इतिहास (History of Childhood) 4
- समाजीकरण की समझ : अवधारणा, कारक तथा विविध सन्दर्भ (Understanding of Socialization : Concept, Causes and Different Context) 5
- बच्चों का समाजीकरण (Socialization of Children) 6
- (I) माता-पिता (Parents) 6
- (II) परिवार (Family) 6
- परिवार की मुख्य विशेषताएँ (Chief Characteristics of Family) 7
- परिवार के कार्य (Functions of Family) 8
- बालक के विकास में परिवार का योगदान (Contribution of Home in Child Development) 9
- परिवार का बाल विकास पर प्रभाव (Effect of Family on Child Development) 9
- बाल विकास में बच्चों एवं बड़ों के आपसी सम्बन्ध (Relation between Child and Adult in Child Development) 10
- (III) पड़ोस (Neighbourhood) 11
- (IV) बच्चों के समाजीक्रण में जेण्डर एवं समुदाय की भूमिका (Role of Gender and Community in Socialization of Children) 12

- बाल अधिकारों का सन्दर्भ (Context of Children Rights) 13
- बाल अधिकार (Child Rights) 13
- बाल श्रम (Child Labour) 14
- उपेक्षित वर्गों से आने वाले बच्चों पर विशेष चर्चा के साथ (Special Discussion on Children of Neglected Classes) 15
- समाजीकरण में वंचित वर्ग के प्रकार (Types of Deprived in Socialization) 16
- (1) सामाजिक दृष्टि से वंचित (Socially Deprived) 16
- (2) आर्थिक रूप से वंचित वर्ग (Economically Deprived) 16
- (3) सांस्कृतिक रूप से वंचित वर्ग (Culturally Deprived) 17
- विश्व मानवीय अधिकार (World Human Rights) 17
- समावेशन में अनुप्रयोग (Application in Inclusion) 19
- असमर्थ व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति–2006 (National Policy for Disability Person-2006) 19
- विकलांग व्यक्तियों की शिक्षा (Education of Person with Disability) 20
- अभ्यास–प्रश्न (Questions) 21

इकाई—2

विद्यालय और समाजीकरण
(School and Socialization)

2. शिक्षा, विद्यालय और समाज : अन्तर्सम्बन्धों की समझ 22–34

[EDUCATION, SCHOOL AND SOCIETY : UNDERSTANDING OF INTERRELATIONSHIP]

- (I) शिक्षा (Education) 22
- मानव जीवन में शिक्षा के कार्य (Functions of Education in Human Life) 23
- (II) विद्यालय (School) 24
- समाज में विद्यालय का स्थान, महत्त्व व आवश्यकता (Place, Importance and Needs of School in Society) 27
- (III) समाज (Society) 28
- विद्यालय में समाजीकरण प्रक्रिया : विभिन्न कारकों की भूमिका व प्रभावों की समझ (Socialization Process in Schools : Role of Different Factors and Understanding of Effects) 31
- समाजीकरण की प्रक्रिया में शिक्षक का कार्य (Functions of Teacher in Process of Socialization) 32

- शिक्षा, शिक्षण, विद्यालय : सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक व राजनीतिक आधार (Education, Teaching, Schools : Social, Cultural, Economical and Political Bases) 33

इकाई—3

शिक्षा और ज्ञान : विविध परिप्रेक्ष्यों की समझ

(Education and Knowledge : Understanding of Different Perspectives)

3. शिक्षा : सामान्य अवधारणा, उद्देश्य एवं विद्यालयी शिक्षा की प्रकृति 35–60

[EDUCATION : GENERAL CONCEPT, AIMS AND NATURE OF SCHOOL EDUCATION]

- शिक्षा के उद्देश्य (Aims of Education) 37
- (1) ज्ञान का उद्देश्य (Aims of Knowledge) 37
- (2) शारीरिक विकास का उद्देश्य (Aims of Physical Development) 39
- (3) चरित्र विकास का उद्देश्य (Aims of Character Development) 40
- (4) सांस्कृतिक विकास का उद्देश्य (Aims of Cultural Development) 41
- (5) जीविका उपार्जन का उद्देश्य (Aims of Earning) 43
- (6) पूर्ण जीवन का उद्देश्य (Completer Living's Aims) 44
- (7) नागरिकता का उद्देश्य (Aims of Citizenship) 45
- (8) अवकाश–उपयोग का उद्देश्य (Aims of Utilization) 46
- (9) शिक्षा का वैयक्तिक उद्देश्य (Individual Aims of Education) 47
- (10) शिक्षा का सामाजिक उद्देश्य (Social Aims of Education) 49
- विद्यालयी शिक्षा की प्रकृति (Nature of Universities Education) 50
- विद्यालय के कार्य (Functions of Colleges) 51
- विद्यालय तथा समाज का पारस्परिक घनिष्ठ सम्बन्ध (Mutual Intimate Relations of School and Society) 51
- विद्यालय तथा सामाजिक परिवर्तन (School and Social Change) 51
- शिक्षा को समझने के विभिन्न : आधार/दृष्टिकोण : दर्शनशास्त्रीय, मनोवैज्ञानिक, समाजशास्त्रीय, आदि (Different Bases/Viewpoint of Understanding of Education : Philosophical, Psychological, Sociological, etc.) 53
- शिक्षा का साहित्य (Literature of Education) 55
- शिक्षा का इतिहास (History of Education) 56

- ज्ञान की अवधारणा : दार्शनिक परिप्रेक्ष्य (Concept of Knowledge : Philosophical Perspective) 58
- ज्ञान के विविध स्वरूप एवं अर्जन के तरीके (Various Forms of Knowledge and Methods of Achivement) 59
- अभ्यास-प्रश्न (Questions) 60

इकाई—4

प्रमुख चिन्तकों के मौलिक लेखन की शिक्षाशास्त्रीय समझ

(Pedagogical Understanding of Original Act or Writing of Chief Thinkers)

4. महात्मा गाँधी **61–81**

[MAHATMA GANDHI]

- जीवन-परिचय (Life-Sketch) 61
- महात्मा गाँधी का जीवन दर्शन (Philosophy of Mahatma Gandhi's Life) 63
- सर्वोदय (Sarvodaya) 64
- गाँधीजी का शिक्षा-दर्शन (Gandhiji's Philosophy of Education) 65
- शिक्षा के उद्देश्य (Aims of Education) 65
- पाठ्यक्रम (Curriculum) 66
- शिक्षण-विधि (Methods of Teaching) 66
- मार्क्सवाद तथा गाँधीजी का शिक्षा दर्शन (Marxism and Gandhian Philosophy of Education) 67
- गाँधीजी की शैक्षिक विचारधारा की कुछ विशेषताएँ (Some Characteristics of Educational Thought of Gandhiji) 68
- बेसिक शिक्षा (Basic Education) 68
- तत्कालीन शिक्षा प्रणाली (The Then Educational System) 69
- बेसिक शिक्षा का जन्म (Origin of Basic Education) 71
- बेसिक शिक्षा की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि (Historical Background of Basic Education) 72
- बेसिक शिक्षा के मूलभूत सिद्धान्त (Basic Tenents of Basic Education) 73
- बेसिक शिक्षा का क्रियान्वयन (Implementation of Basic Education) 74
- स्वतन्त्र भारत में बेसिक शिक्षा (Basic Education in Independent India) 74

- बेसिक शिक्षा की विशेषताएँ (Characteristics of Basic Education) 76
- गाँधीवाद (Gandhism) 78
- महात्मा गाँधी–हिन्दी स्वराज : सामाजिक दर्शन और शिक्षा के सम्बन्ध को रेखांकित करते हुए (Mahatma Gandhi—Hind Swaraj : Underlining the Relation of Social Philosophy and Education) 79
- महात्मा गाँधी का सामाजिक दर्शन (Social Philosophy of Mahatma Gandhi) 80
- अभ्यास–प्रश्न (Questions) 81

5. गिजु भाई **82–92**

[GIJJU BHAI]

- जीवन तथा कार्य (Life and Works) 82
- तत्कालीन शैक्षिक दशा (The Then Educational Condition) 82
- दक्षिणामूर्ति विद्यार्थी भवन (Dakshinamurti Vidyarthi Bhawan) 83
- बालकों के गाँधी (Gandhi of Children) 83
- बाल देवो भव (Let The Child Be Thy God) 84
- बाल–जगत (The World of the Child) 85
- बाल–अध्ययन (Child Study) 85
- बाल–क्षमता (Child Capacity) 85
- बाल–मन (Child-Mind) 86
- कल्पनाशीलता (Imaginativeness) 86
- बाल–साहित्य और गिजुभाई (Children's Literature and Gijju Bhai) 87
- शैक्षणिक पुस्तक के प्रणेता गिजूभाई (Gijju Bhai as an Author of Book of Teaching) 89
- गिजुभाई बधेका—दिवास्वप्न (Gijju Bhai Badheka : Daydreaming) 91
- अभ्यास–प्रश्न (Questions) 92

6. रवीन्द्रनाथ टैगोर **93–101**

[RABINDRANATH TAGORE]

- जीवन–वृत्त (Life-Sketch) 93
- टैगोर का जीवन–दर्शन (Tagore's Philosophy of Life) 94
- टैगोर का शिक्षा–दर्शन (Tagore's Philosophy of Education) 94
- शिक्षा के उद्देश्य (Aims of Education) 95
- पाठ्यक्रम (Curriculum) 96
- शिक्षण–विधि (Methods of Teaching) 96

- टैगोर की शैक्षिक विचारधारा की कुछ विशेषताएँ (Some Characteristics of Educational Ideology of Tagore) 96
- शान्ति निकेतन (Shanti Niketan) 97
- रवीन्द्रनाथ टैगोर—शिक्षा : सीखने में स्वतन्त्रता एवं स्वायत्तता को रेखांकित करते हुए (Ravindranath Tagore—Education : Underlining Freedom and Autonomy in Learning) 99
- अभ्यास-प्रश्न (Questions) 100

7. मान्तेसरी 102–110
[MONTESSORI]

- जीवन तथा कार्य (Life and Work) 102
- मेरिया मान्तेसरी के शिक्षा सिद्धान्त (Educational Principles of Montessori) 103
- मान्तेसरी शिक्षा पद्धति (Montessori Method of Teaching) 104
- मान्तेसरी विद्यालय (Montessori School) 105
- प्रबोध उपकरण (Didactic Apparatus) 106
- मान्तेसरी एवं किण्डरगार्टन पद्धतियों की तुलना (Comparison Between Montessori and Kindergarten Methods) 108
- मान्तेसरी पद्धति का मूल्यांकन (Evaluation of Montessori Method) 109
- अभ्यास-प्रश्न (Questions) 110

8. ज्योतिबा फुले—हण्टर आयोग (1882) को दिया गया बयान : शैक्षिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक असमानता को रेखांकित करते हुए 111–112
[JYOTIBA PHULE—STATEMENT GIVEN TO HUNTER COMMISSION (1882) : UNDERLINING EDUCATIONAL, SOCIAL AND CULTURAL UNEQUALITY]

- अभ्यास-प्रश्न (Questions) 112

9. डॉ. जाकिर हुसैन 113–126
[DR. ZAKIR HUSSAIN]

- जीवन-वृत्त (Life Sketch) 113
- उनका व्यक्तित्व (His Personality) 113
- उनकी दार्शनिक विचारधारा (His Philosophical Thought) 115
- उनकी शैक्षिक विचारधारा (His Educational Thought) 116
- राष्ट्रीय शिक्षा (National Education) 118
- राष्ट्रीय एकता और शिक्षा (National Integration and Education) 119

- शिक्षा–व्यवस्था और पाठशालाएँ (Eduction System and Schools) 119
- कार्यशालाओं के रूप में विद्यालय (Schools as Workshops) 122
- शिक्षा और कार्य (Education and Work) 123
- डॉ. जाकिर हुसैन—शैक्षिक लेख : बालकेन्द्रित शिक्षा के महत्त्व को रेखांकित करते हुए (Dr. Zakir Hussain—Educational Article : Underlining the Importance of Child-Centred Education) 125
- मूल्यांकन (Evaluation) 125
- अभ्यास–प्रश्न (Questions) 126

10. जे. कृष्णमूर्ति **127–135**

[J. KRISHNAMURTHY]

- जीवन–परिचय (Life-Sketch) 127
- जे. कृष्णमूर्ति की प्रमुख रचनाएँ (Main Compositions of J. Krishnamurthy) 127
- जे. कृष्णमूर्ति का दार्शनिक चिन्तन (Philosophical Thoughts of J. Krishnamurthy) 128
- जे. कृष्णमूर्ति का शैक्षिक चिन्तन (Educational Thoughts of J. Krishnamurthy) 129
- शिक्षा क्या है : सीखने–सिखाने में संवाद की भूमिका को रेखांकित करते हुए (What is Education : Underlining the Role of Communication in Learning-Teaching) 131
- जे. कृष्णमूर्ति के शैक्षिक चिन्तन का मूल्यांकन (Evaluation of J. Krishnamurthy's Educational Thoughts) 134
- अभ्यास–प्रश्न (Questions) 135

11. जॉन डीवी **136–148**

[JOHN DEWEY]

- जीवन की झलक (Glimpse of Life) 136
- डीवी का दर्शन (Dewey's Philosophy) 136
- डीवी का नैमित्तिवाद और प्रयोगवाद (Dewey's Instrumentalism and Experimentalism) 137
- डीवी के नैमित्तिकवादी और प्रयोगवादी दर्शन की त्रुटियाँ (Demerits in Dewey's Instrumentalism and Experimentalism) 138
- डीवी और शिक्षा (Dewey and Education) 139
- डीवी के दर्शन का मूल्य और प्रभाव (Value and Impact of Philosophy of Dewey) 141
- डीवी और प्रयोजनवादी शिक्षा (Dewey and Pragmatic Education) 142

- डीवी के प्रयोजनवाद का भारतीय शिक्षा पर प्रभाव (Impact of Dewey's Pragmatism on Indian Education) 145
- लोकतन्त्र और शिक्षा (Democracy and Education) 147
- अभ्यास–प्रश्न (Questions) 147

इकाई—5

पाठ्यचर्या की समझ : बच्चों तथा समाज के सन्दर्भ में

(Understanding of Course of Study : In Context of Children and Society)

12. पाठ्यचर्या तथा पाठ्यक्रम : अवधारणा तथा विविध आधार 149–160

[CURRICULUM AND COURSE OF STUDY : CONCEPT AND DIFFERENT BASES]

- पाठ्यक्रम का अर्थ (Meaning of Curriculum) 149
- पाठ्यचर्या (Course of Study) 150
- अन्तर्वस्तु के चयन के मानदण्ड (Criteria of Selection of Context) 150
- स्टेनली निस्बत द्वारा प्रस्तावित तालिका का प्रारूप (Form of Proposed Table by Stanley Nisbat) 151
- व्हीलर द्वारा प्रस्तावित मानदण्ड (Proposed Criterion by Wheeler) 152
- अन्तर्वस्तु–चयन के गौण मानदण्ड (Inferior Criterion of Internal Things Selection) 153
- पाठ्यक्रम चयन एवं निर्माण के मापदण्ड एवं प्रक्रियाएँ (Parameters and Procedures of Curriculum Selection and Construction) 154
- बच्चों की पाठ्य–पुस्तकें : शिक्षा, ज्ञान एवं समाजीकरण के माध्यम के तौर पर (Text-Books of Children : As a Medium of Education, Knowledge and Socialization) 158
- स्थानीय पाठ्यचर्या की समझ (Understanding of Local Course of Study) 159
- अभ्यास–प्रश्न (Questions) 160

इकाई—1
बच्चे, बचपन और समाज
(Children, Childhood and Society)

अध्याय—1

बच्चे तथा बचपन

[CHILDREN AND CHILDHOOD]

बच्चे तथा बचपन : सामाजिक, सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक समझ
(CHILDREN AND CHILDHOOD : SOCIAL, CULTURAL AND HISTORICAL UNDERSTANDING)

बचपन की अवधारणा तथा विशेषताएँ (Concept and Characteristics of Childhood)

बचपन में बच्चा एक कोरी स्लेट की भाँति होता है। इस कोरी स्लेट पर हम कुछ भी लिख सकते हैं। हबच्चे के छः वर्ष तक का काल बचपन कहलाता है। बचपन में बच्चे अनुकरणप्रिय होते हैं, वे जैसा देखते हैं, सुनते हैं, वैसा ही करने का प्रयास करते हैं। बालक का बचपन बहुत ही महत्त्वपूर्ण होता है। बच्चे के जन्म के बाद माता-पिता बालक के निर्वाह की जिम्मेदारी को वहन करते हैं। जन्म के समय एवं उसके बाद वह इतना कोमल होता है कि उसे प्रत्येक व्यक्ति अपने आकर्षण का केन्द्र बनाता है। इस अवस्था को शैशवावस्था कहा जाता है। शैशवावस्था बालक का निर्माण काल है, यह अवस्था जन्म से पाँच वर्ष तक होती है। बचपन में बच्चे के व्यक्तित्व का विकास अत्यन्त तीव्र गति से होता है अर्थात् जीवन के सम्पूर्ण विकास का तिहाई विकास बचपन में ही पूर्ण हो जाता है। बचपन के प्रथम ढाई वर्षों में बालक के शरीर और मस्तिष्क की गति सर्वाधिक होती है। इस आयु में बालक अपने घर में ही रहकर घर की संस्कृति एवं पर्यावरण को आत्मसात करने लगता है। बचपन के शेष तीन वर्ष अर्थात् छः वर्ष की आयु तक बालक हाथ-पैरों के उपयोग में नवीन कौशल अर्जित करता है। वह आत्मनिर्भर बन जाता है, वह विभिन्न क्रियाकलापों में समन्वय स्थापित करने लगता है।

'बचपन' एक आनन्ददायी अवस्था है। **कोल** एवं **ब्रूस** ने इसे जीवन का अनोखा काल कहा है। इनके अनुसार, ''वास्तव में माता-पिता के लिए बाल विकास की इस अवस्था को समझना कठिन है। इस अवस्था में जिज्ञासा की विशेष प्रबलता होती है। वह जिन वस्तुओं के सम्पर्क में आता है उनके बारे में प्रश्न पूछकर जानकारी प्राप्त करना चाहता है तथा साथ-साथ बालक में नैतिक गुणों का विकास होने लगता है। बचपन में बालक सभी को प्रसन्न कर देने वाली खेल क्रीड़ाएँ करते हैं। चित्र-विचित्र क्रीड़ाओं तथा क्रियाओं से खुद भी सन्तुष्ट होते हैं तथा बड़ों का भी मनोरंजन करते हैं। आनन्द एक मानसिक प्रक्रिया है जो कि बालक के व्यवहार में प्रदर्शित होती है।

निम्नलिखित प्रकार की गतिविधियाँ बालक को आनन्द प्रदान करने वाली होती हैं; जैसे—

(1) अभिनय और आनन्द (Drama and Pleasure)—अभिनय आनन्द बोध और सृजनात्मकता का साधन है। अभिनय के माध्यम से बालकों में अपने भावों को प्रकट करने की योग्यता का विकास होता है। अभिनय के द्वारा प्रेम, सहयोग, कर्तव्यपरायणता जैसे मानवीय मूल्यों का विकास होता है।

अभिनय के माध्यम से बालकों में सभ्यता और संस्कृति के प्रति रुचि उत्पन्न होती है क्योंकि नाटक प्रायः देश की सभ्यता और संस्कृति से सम्बन्धित होते हैं। चलचित्रों में दिखाई जाने वाली कहानियों के माध्यम से नायक एवं नायिकाओं के प्रति बालकों में आनन्द बोध का विकास होता है क्योंकि उनको समाज में सम्मान प्राप्त होता है। आनन्द बोध का विकास बालक एवं बालिकाओं में भिन्न रूप से पाया जाता है तथा आयु वृद्धि के साथ-साथ इनमें परिवर्तन हो जाते हैं।

इस प्रकार बालकों में आनन्द बोध के विकास पर समाज, अभिभावक, विद्यालयीय व्यवस्था, संचार साधन एवं संस्कृति, आदि का पूर्ण प्रभाव पड़ता है।

(2) कला एवं आनन्द (Art and Pleasure)—कला के सन्दर्भ में कहा जाता है कि कला ही जीवन है। कला के माध्यम से बालक में जीवन सम्बन्धी विभिन्न मूल्यों का विकास होता है। कला की व्यापकता पर विचार किया जाय तो इसका क्षेत्र पूर्णत: मानव के सामाजिक आध्यात्मिक समाज में देखने को मिलते हैं; जैसे—चित्रकला, वास्तुकला एवं स्थापत्य कला, आदि इन समस्त कलाओं का प्रभाव बालक की आनन्द बोध एवं सृजनात्मक विकास की प्रक्रिया पर पड़ता है।

(3) कुठपुतली का खेल और आनन्द (Pleasure and Play of Puppet)—कठपुतली के खेल से बालकों में इनके सौन्दर्य के प्रति आकर्षण होता है इसलिए बालक इनको रुचिपूर्ण ढंग से देखते हैं और इसको बनाने का प्रयास भी करते हैं इससे उनमें हस्त-कौशलों का विकास होता है एवं अभिनय करने की प्रवृत्ति जागृत होती है।

(4) संगीत और आनन्द (Pleasure and Music)—संगीत के माध्यम से बालकों में विभिन्न प्रकार के रसों की अनुभूति होती है। संगीत लहरी से उनमें सृजन शक्ति का विकास होता है। संगीत आनन्द बोध की श्रेष्ठ विधि है।

(5) विभिन्न बाल कलाएँ और आनन्द—बालकों द्वारा विभिन्न प्रकार की आनन्ददायी सृजनात्मक उपलब्धियों को बाल कलाओं का नाम दिया जाता है। बालकों में कल्पना एवं क्रियाशीलता का गुण पाया जाता है जिसके द्वारा अनेक प्रकार की गतिविधियाँ सम्पन्न की जाती हैं, जिससे बाल कलाओं का विकास होता है और उन्हें आनन्द भी मिलता है।

क्रियात्मक खेल, मनोरंजक खेल, समूह गीत एवं अभिनय गीत, सामूहिक नृत्य के माध्यम से बालक के शारीरिक तथा बौद्धिक विकास के साथ-साथ मानसिक विकास भी सम्भव होता है।

प्रत्येक परिवार, समुदाय तथा समाज अपने बच्चों एवं उनके बचपन को भिन्न-भिन्न नजरिये से देखता है तथा विभिन्न तरीकों से उनके विकास की व्यवस्था करता है।

बच्चे तथा बचपन : सामाजिक समझ
(CHILDREN AND CHILDHOOD : SOCIAL UNDERSTANDING)

द्वितीय महायुद्ध के बाद विज्ञान और प्रौद्योगिकी की प्रगति के कारण सारे विश्व में बहुत बड़ी औद्योगिक क्रान्ति हुई। इससे परम्परागत सुसंगठित एवं शान्तिपूर्ण सामाजिक जीवन में बहुत बड़ा परिवर्तन आया। दैनिक जीवन में नवीन सुख-साधनों का उपयोग बढ़ जाने से अधिक धन कमाना आवश्यक हो गया। धनोत्पादन की तीव्र प्रतियोगिता के कारण तथा कृषि में यान्त्रिक प्रयोग के कारण गाँवों का नाश होकर धनी बस्ती वाले शहरों का निर्माण हो गया।

औद्योगिक परिवर्तन से समाज की कृषि प्रधान रचना टूटने के कारण बचपन व्यापक रूप से प्रभावित हुआ है। कृषि प्रधान समाज में एकत्र कुटुम्ब पद्धति का विघटन हुआ। महिलाएँ धनार्जन करने घर से बाहर जाने लगीं तथा शहरी संस्कृति में बालकों को जीवन स्पर्शी ज्ञान उपलब्ध होना कठिन हो गया है। इसकी पूर्ति हेतु बालशालाओं का निर्माण हो रहा है।

भारतीय समाज में विभिन्न वर्ग स्तरीय आर्थिक परिस्थितियों में बचपन के स्वरूप को निम्नलिखित प्रकार से वर्णित किया जा सकता है—

1. मध्यम वर्ग में बचपन
2. धनिक वर्ग में बचपन
3. निम्न श्रेणी और मजदूर वर्ग में बचपन

1. मध्यम वर्ग में बचपन (Childhood in Middle Class)

गाँवों के परिवारों में जो मध्यम वर्गीय हैं, वे धन कमाने की लालसा में शहर में आकर बस गये। पूर्व से ही आबादी वाले शहर में जनसंख्या का दबाव होकर सुविधाओं का अभाव होने लगा। बालक-बालिकाओं के विकास पर समूचित ध्यान देने के लिए पूर्व प्राथमिक विद्यालय की स्थापना परमावश्यक होने लगी। इस समस्या के समाधान हेतु गाँवों और शहरों में शिशु-शालाओं का विकास हुआ परन्तु पर्याप्त भूमि एवं साधन सुविधाओं के अभाव में बचपन का वास्तविक विकास नहीं हो पा रहा है।

2. धनिक वर्ग में बचपन (Childhood in Rich Class)

बड़े-बड़े उद्योगपतियों एवं धनिक वर्गों के घरों में खेल एवं साधनों की विपुलता तो रहती है, देखभाल के लिए नौकर भी होते हैं किन्तु मर्यादित कुटुम्ब होने के कारण बालक-बालिकाओं को खेलने के लिए समवयस्क संगी-साथी नहीं मिलते। माता-पिता अपने कारोबार, राग-रंग में व्यस्त रहते हैं, फलस्वरूप उनके बच्चों को स्नेहपूर्ण संसर्ग नहीं मिलता। धनवानों को अपनी प्रतिष्ठा की चिन्ता होती है इसलिए वे सामान्य समवयस्कों से नहीं मिल पाते। इस समस्या के समाधान हेतु विशेष नर्सरी स्कूल प्रारम्भ हो गये हैं। इनमें उन बालकों के व्यक्तित्व का विकास भी विशेष प्रकार से होता है।

3. निम्न श्रेणी एवं मजदूर वर्ग में बचपन (Childhood in Labour Class)

मजदूर वर्ग की बस्तियों में माता-पिता दोनों ही काम पर जाते हैं। घर पर रहने वाले बालक-बालिकाओं को न खेलने की सुविधा होती है न ही उनकी देखभाल करने वाला रहता है। वे इधर-उधर बेकार घूमते रहते हैं। भूख-प्यास का उन्हें कोई आभास नहीं होता है। उनके व्यक्तित्व विकास का प्रश्न नगण्य रहता है। इन बालकों को कुछ आश्रय देने की दृष्टि से तथा उपद्रव से बचने की दृष्टि से मजदूर बस्ती के बालकों को कुछ आश्रय देने की दृष्टि से तथा उपद्रव से बचने की दृष्टि से मजदूर बस्तियों में बाल-गृहों में बस्ती के बालकों के लालन-पालन, खेलकूद और अल्पाहार की व्यवस्था होती है परन्तु अभी बाल विकास हेतु बहुत सुधार आवश्यक है।

बच्चे तथा बचपन : सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक समझ
(CHILDREN AND CHILDHOOD : CULTURAL AND HISTORICAL UNDERSTANDING)

संसार में नये के प्रति कौतूहल रहता है। नयेपन को अपनाने का आग्रह तीव्र होने के कारण हम पुराने को त्याग देते हैं परन्तु प्रत्येक नया अपनाने योग्य नहीं होता और पुराना त्याज्य योग्य नहीं होता। इसको समझने के लिए हम आधुनिकीकरण एवं संस्कृति का सहारा लेते हैं। आधुनिकीकरण से पुरानी आस्थाओं एवं मान्यताअओं से लोगों का विश्वास हो जाता है तथा नवीम मान्यताओं को ग्रहण करते हैं। ऐसा करने में सांस्कृतिक आस्थाएँ जो शाश्वत् मूल्यों पर आधारित होती हैं एवं परम्परागत होती हैं, उनके सांस्कृतिक दृष्टि से पिछड़ने का सदैव भय बना रहता है।

संस्कृति का अर्थ (Meaning of Culture)—जीवन-शैली के स्वरूप को प्रस्तुत करने का कार्य संस्कृति करती है। संस्कृति शब्द की व्युत्पत्ति सम् उपसर्ग कृ-धातु स्तिन-प्रत्यय से हुई है। इसमें जीवन के सभी पक्षों का समन्वय है।

राल्फलिटन के अनुसार, ''संस्कृति सीखे हुए व्यवहारों तथा उनके परिणामों का वह समग्र रूप है, जिसके निर्माणकारी तत्त्व किसी विशिष्ट समाज के सदस्यों द्वारा प्रयुक्त और संचारित होते हैं।''

संस्कृति का सम्बन्ध मनुष्य की समस्त जीवन-शैली से होता है। सभ्यता संस्कृति का भौतिक पक्ष है। भौतिक तथा अभौतिक संस्कृति को क्रमशः सभ्यता तथा संस्कृति कहा जाता है। संस्कृति मानव द्वारा निर्मित भौतिक एवं अभौतिक तत्त्वों का संग्रह होता है।

संस्कृति के प्रकार (Types of Culture)—संस्कृति दो प्रकार की होती है—

1. भौतिक संस्कृति, 2. सूक्ष्म या अभौतिक संस्कृति।

(1) भौतिक संस्कृति (Physical Culture)—यह वह संस्कृति होती है, जो हमें भौतिक रूप में स्पष्ट दिखायी देती है। **उदाहरण**—मकान, वस्त्र, भोजन तथा बर्तन, आदि सभी भौतिक संस्कृति में गिने जाते हैं।

(2) सूक्ष्म या अभौतिक संस्कृति (Micro or Unphysical Culture)—धार्मिक, दार्शनिक, विश्वास, विचार तथा मूल्य, आदि सूक्ष्म या अभौतिक संस्कृति कहलाते हैं। अभौतिक संस्कृति व्यक्ति के विचारों को अभिव्यक्ति प्रदान करती है।

बचपन जन्म से लेकर किशोरावस्था तक के आयु काल को कहते हैं। विकासात्मक मनोविज्ञान में, बचपन को शैशवावस्था (चलना सीखना), प्रारम्भिक बचपन (खेलने की उम्र) तथा किशोरावस्था (वयः सन्धि) के विकासात्मक चरणों में विभाजित किया गया है।

सामान्य शब्दों में, बचपन को जन्म से आरम्भ हुआ माना जाता है। अवधारणा के रूप में कुछ लोग बचपन को खेल और मासूमियत से जोड़कर देखते हैं, जो किशोरावस्था में समाप्त होता है।

बचपन के विकासात्मक चरण
(DEVELOPMENTAL STEPS OF CHILDHOOD)

शैशवावस्था के बाद प्रारम्भिक बचपन आता है और बच्चे लड़खड़ाते हुए चलने लगते हैं। बच्चा बोलना और स्वतन्त्र रूप से कदम बढ़ाने लगता है। शैशवावस्था की तीन वर्ष की उम्र समाप्त होते ही बच्चा बुनियादी जरूरतों के लिए अपने माता-पिता पर कम निर्भर रहने लगता है। प्रारम्भिक बचपन सात से आठ वर्ष की उम्र तक चलता है। प्रारम्भिक बचपन की अवधि जन्म से आठ वर्ष की उम्र तक होती है।

मध्य बचपन (Middle Childhood)—मध्य बचपन लगभग सात या आठ वर्ष की उम्र से शुरू होता है जो अनुमानत: प्राथमिक स्कूल की उम्र है और लगभग यौवन काल पर समाप्त होता है, जो किशोरावस्था की शुरुआत है।

पूर्व किशोरावस्था (Pre Adolescent)—इसका कुछ भाग उत्तर बाल्यावस्था और कुछ भाग किशोरावस्था में पड़ता है। लड़कियों में यह अवस्था 11 से 15 वर्ष तक तथा लड़कों में 12 से 17 वर्ष तक रहती है। इस अवस्था में मुख्यत: यौन अंगों का विकास होता है। इस अवस्था में बालक अक्सर अपना सामाजिक और संवेगात्मक नियन्त्रण खो देते हैं। उनके जीवन में भावात्मक एवं ज्ञानात्मक बदलाव भी तेजी से शुरू होते हैं। उनके जीवन में अस्थिरता, कौतूहल तथा नकारात्मक प्रवृत्तियाँ बढ़ती हैं। इस अवस्था में बच्चे स्वयं के बारे में सोचना शुरू कर देते हैं।

बचपन का इतिहास
(HISTORY OF CHILDHOOD)

यह तर्क दिया जाता है कि बचपन एक प्राकृतिक घटना न होकर समाज की रचना है। एक महत्त्वपूर्ण मध्यवादी तथा इतिहासकार फिलिप एरिस ने अपनी पुस्तक 'सेंचुरीज ऑप चाइल्डहुड' में इस बात को उठाया है। एरिस ने पाया कि 17वीं शताब्दी से पहले बच्चों का प्रतिनिधित्व अल्प वयस्कों की तरह किया जाता था। तब से इतिहासकारों द्वारा गुजरे जमाने के बचपन पर काफी शोध किया गया है।

नवजागरण काल के दौरान, यूरोप में बच्चों का कलात्मक प्रदर्शन नाटकीय रूप से बढ़ गया, इसमें बच्चों के प्रति सामाजिक रवैये को प्रभावित नहीं किया।

जीन जैक्स रूसो वे व्यक्ति हैं जिन्हें बचपन की आधुनिक धारणा की उत्पत्ति का श्रेय दिया जाता है।

समकालीन युग में किन्चेबो और स्टीनबर्ग ने बचपन और बचपन की शिक्षा पर एक आलोचनात्मक सिद्धान्त का निर्माण किया जिसे उन्होंने किण्डरकल्चर का नाम दिया। इन्होंने बचपन के अध्ययन के लिए कई अनुसन्धान और सैद्धान्तिक विमर्शों का उपयोग विभिन्न दृष्टिकोणों; जैसे—इतिहास लेखन, संज्ञानात्मक अनुसन्धान, सांस्कृतिक अध्ययन, आदि के आधार पर किया और उन्होंने दृढ़तापूर्वक कहा कि आधुनिक काल ने बचपन के नये युग में प्रवेश किया है। इनका मानना है कि बेशक, सूचना प्रौद्योगिकी ने अकेले ही बचपन के नये युग का सूत्रपात नहीं किया है, जाहिर है कि कई सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक कारकों ने इस तरह के परिवर्तनों को संचालित किया है। किण्डरकल्चर समझता है कि बचपन एक सामाजिक और ऐतिहासिक शिल्पकृति है न कि केवल एक जैविक इकाई क्योंकि कई मनोवैज्ञानिकों ने तर्क दिया है कि बचपन बढ़ने, वयस्क बनने का एक प्राकृतिक चरण है।

स्वतन्त्रता, वैयक्तिकता और समानता के विमर्श के रूप में बच्चे को देखने की शुरुआत 18वीं सदी के मध्य में पश्चिमी यूरोप में हुई थी। इस विमर्श को 150 साल हो चुके थे। जब मॉण्टेसरी और पियाजे जैसे विद्वानों ने बचपन का रेखाचित्र खींचा था। इन दोनों ने ही बच्चों के दिमाग के विकास को जीव विज्ञान में स्थित पाया।

भारत देश में 1930 के दशक में हिन्दी और अन्य कई भाषाओं में बच्चों के साहित्य के लिए एक लम्बा सुनहरा समय आया। बचपन को समझने की अलग एक निराली सृजनात्मक प्रक्रिया अपनायी गयी थी। इस लहर में विभिन्न प्रकार के तत्त्व थे। महात्मा गाँधी द्वारा की गई उस वक्त की स्कूली शिक्षा की समालोचना और शिक्षण पद्धति की आधुनिक शैली के क्रान्तिकारी स्वरूप के उनके प्रस्ताव को इसी व्यापक सन्दर्भ में देखा जाना चाहिए। टैगोर और गाँधीजी ने शिक्षण पद्धति की अपनी अलग-अलग दृष्टियों और सरोकारों के द्वारा बचपन को गढ़ने के साहसिक प्रयास किये।

समाजीकरण की समझ : अवधारणा, कारक तथा विविध सन्दर्भ
(UNDERSTANDING OF SOCIALIZATION : CONCEPT, CAUSES AND DIFFERENT CONTEXT)

समाजीकरण की अवधारणा (Concept of Socialization)

बच्चा जब जन्म लेता है, उस समय उसमें न तो कोई सामाजिक गुण होता है न ही कोई समाज विरोधी गुण। उस समय तो वह थोड़े से प्राणी शास्त्रीय गुणों वाला एक जीवित प्राणी होता है। बालक सामाजिक परम्पराओं तथा रुचियों के अनुसार व्यवहार करना सीख जाता है। इसके द्वारा अपने को पशु जगत से पृथक् कर लेता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि ''जैविक प्राणी से सामाजिक प्राणी में बदलना 'समाजीकरण कहलाता है।'' अत: समाजीकरण एक निश्चित एवं निरन्तर प्रक्रिया है जो जन्म से ही प्रारम्भ होती है।

समाजीकरण से व्यक्ति मनुष्य बनता है और अपनी सामाजिक-सांस्कृतिक विरासत का सक्रिय भागीदार बनता है और अपने व्यक्तित्व का विकास करता है। संक्षेप में, समाजीकरण व्यक्ति की सामाजिक जीवन के ढंग को सिखाने की महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है।

समाजीकरण का अर्थ (Meaning of Socialization)

समाजीकरण एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति प्राणी बनता है। इस प्रक्रिया द्वारा व्यक्ति को समाज अपनी परम्पराओं, मान्यताओं तथा आदर्शों के अनुसार बनाता है एवं स्वीकृति प्रदान करता है। इसमें व्यक्ति अन्य व्यक्तियों से अन्त:प्रक्रिया करता हुआ सामाजिक आदतों, विश्वासों, रीति-रिवाजों तथा परम्पराओं एवं अभिवृत्तियों को सीखता है।

समाजीकरण की परिभाषाएँ (Definitions of Socialization)

विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गई समाजीकरण की परिभाषाएँ इस प्रकार हैं—

प्रो. ग्रीन के अनुसार, ''समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा बच्चा सांस्कृतिक विशेषताओं, आत्म तथा व्यक्तित्व को प्राप्त करता है।''

"Socialization is the process by which the child acquired a cultural content along with selfhood and personality." —**Prof. Green**

वॉटसन के अनुसार, ''समाजीकरण एक सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है।''

"Socialization is a social and psychological process." —**Watson**

सोरोकिन के अनुसार, ''समाजीकरण सांस्कृतिक तथा वैचारिक कारकों के अन्तरीकरण की प्रक्रिया है।''

"Socialization is the process of internalization of ideological and cultural factors." —**Sorokin**

समाजीकरण के कारक (Factors of Socialization)

समाजीकरण के कुछ महत्त्वपूर्ण कारक हैं जो कार्य करते हैं। इनका विवेचन नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है—

(1) सुझाव (Suggestion)—सुझाव समाजीकरण का एक महत्त्वपूर्ण कारक है। बच्चों को ज्ञान एवं अनुभव कम होता है, इस कारण वे सुझाव शीघ्र मान लेते हैं। वे सुझावों को मानकर दूसरों के अनुभवों से लाभ उठाना सीख जाते हैं।

(2) अनुकरण (Imitation)—अनुकरण समाजीकरण की प्रक्रिया में महत्त्वपूर्ण कारक है। नकल करना सामाजिक जीवन का महत्त्वपूर्ण आधार है, संकेत भाषा तथा कार्य करने के विभिन्न ढंग अनुकरण द्वारा ही सीख जाते हैं।

(3) सहानुभूति (Sympathy)—सहानुभूति बच्चों को द्वेष, भावनाओं एवं प्रेरणाओं को सीखने में सहायक होती है। बच्चों का उद्वेगिक जीवन इसी पर आधारित होता है।

(4) पुरस्कार एवं दण्ड (Reward and Punishment)—पुरस्कार एवं दण्ड भी समाजीकरण की प्रक्रिया में महत्त्वपूर्ण कार्य करते हैं। इनके माध्यम से बच्चों को सामाजिक प्रतिमानों के अनुसार कार्य करने के लिए प्रेरित किया जाता है।

समाजीकरण के दो चरण माने गए हैं—प्राथमिक समाजीकरण एवं परवर्ती समाजीकरण। इन दोनों प्रकार के समाजीकरण को उनके कारकों के आधार पर समझा जा सकता है। परिवारीजनों के माध्यम से बच्चे के जन्म से ही समाजीकरण की जो औपचारिक प्रक्रिया शुरू हो जाती है उसे **प्राथमिक समाजीकरण** के रूप में समझा जा सकता है। इसके अन्तर्गत बच्चे अपने सांस्कृतिक मूल्य, व्यवहार, सामाजिक मान्यताओं, आदि को सीखते हैं। बच्चों का प्राथमिक समाजीकरण माता-पिता, परिवार, पड़ोस एवं समुदाय के द्वारा होता है। जबकि द्वितीयक समाजीकरण में विद्यालय एवं संचार माध्यम प्रमुख भूमिका निभाते हैं।

बच्चों के प्राथमिक समाजीकरण में आस-पड़ोस की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। परिवार के बाद बच्चे का पहला कदम पड़ोस ही होता है। बच्चे के समाजीकरण में परिवार, मित्र-समूह, समुदाय, विद्यालय, संचार माध्यम एवं धर्म प्रमुख भूमिका निभाते हैं। परिवार बच्चे के समाजीकरण की प्रथम इकाई है। धर्म, संस्कृति, लिंग, जाति से सम्बन्धित प्राथमिक व्यवहारों की नींव परिवार में ही पड़ती है। छोटी उम्र में ही परिवार दण्ड, पुरस्कार तथा पुनर्बलनों का उपयोग कर परिवार एवं समाज के वांछित व्यवहारों को आकार देता है।

परवर्ती समाजीकरण के सन्दर्भ में विद्यालय की भूमिका महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। विद्यालय समाजीकरण में समाज एवं राज्य के बीच की कड़ी की भूमिका निभाता है। इसके साथ ही संचार माध्यम समाजीकरण के प्रमुख कारक के रूप में उभरा है। कार्टून चैनलों की भरमार एवं मोबाइल फोन की उपलब्धता ने बच्चों की सामाजिकता को प्रभावित किया है। ये संचार माध्यम धीरे-धीरे बच्चों को परिवार एवं समुदाय से दूर करते चले जा रहे हैं।

बच्चों का समाजीकरण
(SOCIALIZATION OF CHILDREN)

I. माता-पिता
(PARENTS)

परिवार का योगदान समाजीकरण की सबसे महत्त्वपूर्ण संस्था है, यहीं से बालक सर्वप्रथम समाजीकरण आरम्भ करता है। इसी कारण परिवार बालक की सर्वप्रथम पाठशाला कही जाती है। परिवार ही वह जगह है, जहाँ से बालक आदर्श नागरिकता का पाठ सीखता है। बालक के समाजीकरण को प्रभावीकरण करने वाले तत्त्व निम्नलिखित हैं—

(1) माता-पिता की भूमिका (Role of Parents)—बच्चे के जीवन में माता-पिता की भूमिका बहुत अहम् होती है। माता-पिता बच्चों की जिन्दगी में साँचे की तरह काम करते हैं। साँचा वह होता है जिससे कि किसी भी चीज को सही आकार दिया जाता है। माता-पिता बचपन से लेकर बड़े होने तक अपने बच्चों की जो देखभाल करते हैं वैसा प्यार कोई नहीं करता है। माता-पिता के दिए हुए संस्कारों को बच्चे अपनाते हैं। अच्छा बोलना, अच्छा व्यवहार सिखाते हैं। अपने बच्चों को आने वाले जीवन के लिए तैयार करते हैं और सही दिशा दिखाते हैं।

(2) माँ की भूमिका (Role of Mother)—बालक का परिवार में सबसे घनिष्ठ सम्बन्ध माँ से होता है। माँ उसे दूध पिलाती है और उसकी देखभाल करती है। यदि माँ बालक की देखभाल अच्छे से नहीं करती तो उसका प्रभाव बालक के उचित समाजीकरण पर पड़ता है।

(3) अधिक लाड़-प्यार (Too Much Fondness)—परिवार द्वारा आवश्यकता से अधिक प्यार करने से तथा उन्हें किसी प्रकार का कार्य नहीं करने देने से समाजीकरण रुक जाता है या ठीक ढंग से नहीं होता है जिसके परिणामस्वरूप बालक बिगड़ जाता है।

(4) माता-पिता का आपसी सम्बन्ध (Mutual Relation of Parents)—जिन परिवारों में माता-पिता के आपसी सम्बन्ध अच्छे होते हैं, उन परिवारों का समाजीकरण उचित ढंग से होता है। इसके विपरीत जिन परिवारों में माता-पिता आपस में झगड़ते हैं, इसका बुरा प्रभाव बच्चों पर पड़ता है, इससे उनका समाजीकरण विकृत होता है।

(5) माता-पिता के बच्चे के साथ सम्बन्ध (Relations of Parents with Child)—माता-पिता के उचित स्नेह देने से बच्चों में अच्छे सामाजिक गुण पैदा होते हैं। उचित प्यार एवं सुरक्षा के अभाव में वे डरे-सहमे रहते हैं तथा पूर्ण रूप से माता-पिता पर निर्भर रहते हैं। जहाँ कम स्नेह-प्यार मिलता है तो उनमें बदला लेने की भावना बचपन से ही पनपती है और वे अपराधी बन जाते हैं।

(6) बच्चों की अच्छी शिक्षा ग्रहण करने में योगदान (Contribution in Achieving Good Education of Children)—जीवन के सभी नैतिक मूल्य बच्चे माता-पिता से ही सीखते हैं। विद्यालय भेजकर अच्छी शिक्षा ग्रहण करने के लिए वे तत्पर रहते हैं। विद्यालय में दी गई शिक्षा को घर जाकर सही मायने में उपयोग करना माता-पिता से ही सीखते हैं। नियमितता, समय का पालन करना, देशप्रेमी होना, संस्कारनिष्ठ बनना, दूसरों की मदद करना यह केवल माता-पिता सिखाते हैं। इसलिए माता-पिता की भूमिका बच्चों के शिक्षण में सबसे अधिक और अहम् हो जाती है।

(7) बच्चों के व्यक्तित्व विकास में माता-पिता की भूमिका (Role of Parents in Personality Development of Children)—बच्चों के व्यक्तित्व विकास के लिए अनुशासन, पारिवारिक माहौल जिम्मेदार होते हैं। अति प्रेम या अति डाँटना-मारना इसका असर उनके व्यक्तित्व के निर्माण पर होता है, इससे बुरी संगत में पड़ना, उनके अन्दर विरोधी भावना पनपना तथा गलत कार्य की ओर बढ़ना प्रारम्भ होता है। आज संयुक्त परिवार टूटकर एकल परिवार में बच्चों की परवरिश होती है, उनके उचित विकास के लिए माता-पिता का पूरा प्यार व समय उसे मिलना चाहिए। घर में तनाव, कलह हो तो इसका विपरीत परिणाम बच्चों पर पड़ता है। बच्चा कोरे कागज के समान होता है, जो भी उसके सामने आएगा उसकी अमिट छाप उसके चित्त पर पड़ती है और आजीवन के लिए उसकी हो जाती है, इसलिए अपने विचार उन पर नहीं थोपने चाहिए, उसे प्रकृति एवं दुनिया को समझने का भरपूर मौका देना चाहिए।

II. परिवार
(FAMILY)

परिवार का अर्थ (Meaning of Family)—परिवार अथवा घर किसी समाज अथवा राष्ट्र की सबसे छोटी इकाई है। समाजशास्त्र की दृष्टि से परिवार सबसे पहला छोटा और मूलभूत सामाजिक समूह है। इसमें प्राय: पति-पत्नी एवं उनकी सन्तान संगठित रूप से एक स्थान पर रहते हैं। एक परिवार में एक से अधिक दम्पत्ति एवं उनकी सन्तानें हो सकती हैं परन्तु इनमें रक्त का सीधा सम्बन्ध होना आवश्यक है।

परिवार की परिभाषा (Definition of Family)—परिवार को विचारकों ने अपने-अपने मतानुसार बतलाया जो निम्न प्रकार हैं—

मैकाइवर तथा पेज के अनुसार, ''परिवार एक ऐसा समूह है जिसमें स्त्री-पुरुष में यौन सम्बन्ध होता है जो बच्चों को पैदा करने और उनके लालन-पालन की व्यवस्था करता है।''

"Family is a group in which there are sex relations between man and woman and which gives birth to the children and bring them up." —**MacIver** & **Page**

क्लेयर के अनुसार, ''परिवार से हमारा तात्पर्य उस सम्बन्ध से है जो माता-पिता और बच्चों में विद्यमान रहता है।''

"By family we mean a system of relationship existing between parents and children." —**Clare**

भारतीय परिवारों का विश्लेषण करने पर उनमें पाँच तत्त्व देखने को मिलते हैं—

1. दाम्पत्य जीवन,
2. रक्त का सम्बन्ध,
3. संयुक्त उत्तरदायित्व,
4. कार्य विभाजन,
5. एक-दूसरे की सुविधा का ध्यान।

परिवार की मुख्य विशेषताएँ
(CHIEF CHARACTERISTICS OF FAMILY)

ये निम्न हैं—

(1) सार्वभौमिकता (Universality)—संसार का कोई भी समाज ऐसा नहीं है जहाँ परिवार किसी-न-किसी रूप में न पाया जाता हो। परिवार एक सार्वभौमिक संस्था है यह विश्व के कोने-कोने में पायी जाती है।

(2) सीमित आकार (Limited Size)—परिवार का एक छोटा-सा सीमित आकार होता है। इसमें सदस्यों की संख्या भी सीमित होती है। 'छोटा परिवार सुखी परिवार'।

(3) उत्तरदायित्व (Responsibility)—अपने पारिवारिक संगठन में प्रत्येक व्यक्ति की पारिवारिक जिम्मेदारी होती है और प्रत्येक परिवार का एक उत्तरदायित्व होता है जो परिवार की जिम्मेदारियों का निर्वाह करता है।

(4) सामाजिक संगठन का केन्द्र (Centre of Social Organization)—परिवार सामाजिक संगठन का केन्द्र होता है। विभिन्न परिवारों से मिलकर समाज की रचना होती है। परिवार समाज की ही छोटी इकाई होती है।

(5) सामाजिक गुणों का पालना (Cradle of Social Quality)—बच्चे में सामाजिक गुणों का विकास परिवार में ही रहकर होता है। बालक पर परिवार का अधिक प्रभाव पड़ता है।

(6) जन्मजात प्रवृत्तियाँ पारिवारिक आधार के रूप में (Innate Tendencies as basis of Family)—लैंगिक सम्बन्ध तथा माता-पिता का अपनी सन्तान से प्रेम, आदि जन्मजात प्रवृत्तियाँ परिवार के निर्माण का आधार होती हैं।

(7) संस्था के रूप में स्थायी (Permanent as Institution)—परिवार संस्था के रूप में स्थायी होता है।

परिवार के कार्य
(FUNCTIONS OF FAMILY)

घर या परिवार के कुछ कार्य निम्नलिखित हैं—

(1) बच्चों का शारीरिक विकास (Physical Development of Children)—बच्चों का पालन-पोषण प्राय: परिवारों में ही होता है। भारत में तो बच्चों के पोषण का एकमात्र साधन परिवार ही होता है। पोषण संस्थान के रूप में परिवार बच्चों के खाने-पीने की व्यवस्था करते हैं। उनकी देखभाल करते हैं और रोगग्रस्त होने पर इनका इलाज करते हैं। शिक्षा के अभिकरण के रूप में ही बच्चों को ऐसा नियमित जीवन व्यतीत करने का प्रशिक्षण देते हैं जो स्वास्थ्य लाभ तथा उनकी रक्षा के लिए आवश्यक होता है। बच्चे अपने परिवार के सदस्यों का अनुकरण कर समय पर उठना, खड़े होना तथा चलना और समय पर निद्रा लेना, आदि सीखते हैं। इनमें उनका शारीरिक विकास होता है।

(2) मानसिक विकास का अभिकरण (Agency of Mental Development)—प्रत्येक बच्चा कुछ जन्मजात शक्तियाँ लेकर पैदा होता है। इन्हीं शक्तियों के आधार पर उसका विकास होता है। बच्चों के मानसिक विकास के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें विभिन्न परिस्थितियों में रखकर इन्द्रियानुभव कराया जाए। बच्चे जन्म से कुछ दिन बाद ही अपने परिवार के सदस्यों का अनुकरण कर भाषा सीखना आरम्भ कर देते हैं। यही कारण है कि बच्चे जिस परिवार में जन्म लेते हैं और पलते हैं उसी की भाषा सीखते जाते हैं। बच्चे के बौद्धिक विकास में पहेलियों तथा कहानियों का भी बड़ा हाथ होता है। हमारे भारतीय परिवारों में दादा-दादी, नाना-नानी, आदि का भी बड़ा महत्त्व है। हमारे भारतीय परिवारों में घर के वयस्क लोग बच्चों को स्तरानुकूल कहानियाँ सुनाकर उनकी कल्पना शक्ति विकसित करते हैं।

(3) सामाजिक विकास (Social Development)—एक परिवार सर्वप्रथम छोटा एवं मूलभूत सामाजिक समूह है। इस सामाजिक समूह के सामाजिक पर्यावरण में बच्चे प्रेम एवं सहानुभूतिपूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं तथा इस प्रकार शिक्षा प्राप्त करते हैं। यहाँ वे एक-दूसरे की सहायता करना सीखते हैं। उचित व अनुचित ज्ञान प्राप्त करने की क्षमता का विकास भी परिवार से ही होता है। परिवार के बच्चे एक-दूसरे के साथ समायोजन करना सीखते हैं।

परिवार में रहते हुए भी बच्चे अन्य सामाजिक समूहों से दूर नहीं रहते। दो वर्ष की आयु में होने पर घर से बाहर निकलकर खेलने-कूदने लगते हैं जिन घरों में जितनी अधिक सामाजिक भावना होती है, उन घरों के बच्चों में उतनी ही अधिक सामाजिकता होती है।

(4) सांस्कृतिक विकास (Cultural Development)—बच्चा जिस परिवार में पैदा होता है उसकी ही भाषा सीखता है तथा उसी के रहन-सहन, खान-पान तथा व्यवहार के तरीके सीखता है। रीति-रिवाज, मूल्य और मान्यताओं की शिक्षा भी बच्चा परिवार में ही पाता है। यहीं उनकी रुचियों तथा पसन्दों का विकास होता है।

(5) आध्यात्मिक विकास (Spiritual Development)—भारत एक धर्म प्रधान देश है। हमारे यहाँ लगभग सभी लोग किसी-न-किसी धर्म को मानते हैं जब बच्चे अपने परिवार में माता-पिता तथा भाई-बहन, आदि को विशेष प्रकार की धार्मिक क्रियाओं को करते देखते हैं तो उन क्रियाओं के प्रति वे स्वाभाविक आकर्षित होते हैं. धीरे-धीरे उनमें इन क्रियाओं के प्रति स्थायी भाव बन जाते हैं। बड़े होने पर वे अपने धर्म और मान्यताओं से परिचित होते हैं।

(6) नागरिक विकास (Civic Development)—बच्चा उच्च नागरिकता का प्रथम पाठ माता के चुम्बनों और पिता के आलिंगनों से सीखता है। बच्चा परिवार से कई नागरिक गुणों को सीखता है। यह परिवार ही है जो बच्चे को अपने कर्तव्य एवं दायित्व को पहचानने और निभाने में सहायता प्रदान करता है। ये बच्चे में अनुशासन, सहयोग तथा सहनशीलता के गुणों को विकसित करता है।

बालक के विकास में परिवार का योगदान
(CONTRIBUTION OF HOME IN CHILD DEVELOPMENT)

परिवार बालक के विकास की प्रथम पाठशाला है। यह बालक में निहित योग्यताओं एवं क्षमताओं का विकास करता है। परिवार का प्रत्येक सदस्य, बालक के विकास में योगदान देता है।

यंग एवं **मैक** के अनुसार, ''परिवार सबसे पुराना और मौलिक मानव समूह है। पारिवारिक ढाँचे का विशिष्ट रूप एक समाज से दूसरे समाज में भिन्न हो सकता है और होता है पर सब जगह परिवार के मुख्य कार्य हैं—बच्चे का पालन करना, उसे समाज की संस्कृति से परिचित कराना, सारांश में उसका सामाजीकरण करना।''

"The family is the oldest human group and the basic one. While the particular form of family structure may and does vary from society to society. The central for of his family activities everywhere are child bearing and the initial induction of the child into the culture of a given society in short, socialization." —**Young & Mack**

परिवार या घर समाज की न्यूनतम समूह इकाई है। इसमें पति-पत्नी, बच्चे तथा अन्य आश्रित व्यक्ति सम्मिलित हैं। इसका मुख्य आधार रक्त सम्बन्ध है।

क्लेयर ने लिखा है कि, ''परिवार सम्बन्धों की वह व्यवस्था है जो माता-पिता तथा सन्तानों के मध्य पाई जाती है।''

"By family we mean a system of relationship existing between parents and children." —**Clare**

बच्चे का पालन-पोषण परिवार में जिस प्रकार से होता है बड़े होकर वही संस्कार आदतें बालक में दिखाई देते हैं।

परिवार का बाल विकास पर प्रभाव
(EFFECT OF FAMILY ON CHILD DEVELOPMENT)

माण्टेसरी ने बालकों के विकास के लिए परिवार के वातावरण तथा परिस्थिति को महत्त्वपूर्ण माना है इसीलिए उन्होंने विद्यालय को बचपन का घर (House of Childhood) कहा है।

रेमण्ट के अनुसार, ''घर ही वह स्थान है जहाँ उनमें महान् गुण उत्पन्न होते हैं जिनकी सामान्य विशेषता सहानुभूति है। घर में घनिष्ठ प्रेम की भावनाओं का विकास होता है। यहीं बालक, उदारता, अनुदारता, निस्वार्थ और स्वार्थ, न्याय और अन्याय, सत्य और असत्य, परिश्रम और आलस्य में अन्तर सीखता है।''

बालक के जीवन पर घर या परिवार का प्रभाव निम्न प्रकार से पड़ता है—

1. घर बालक की प्रथम पाठशाला है। वह घर में वे सभी गुण सीखता है, जिनकी पाठशाला में आवश्यकता होती है।
2. बालक को घर पर नैतिकता एवं सामाजिकता का प्रशिक्षण मिलता है।
3. समायोजन तथा अनुकूलन के गुण विकसित करता है।
4. सामाजिक व्यवहार का अनुकरण करता है।
5. सामाजिक नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों को विकसित करने में घर का योगदान प्रमुख है।

6. उत्तम आदतों एवं चरित्र के विकास में योग देता है।
7. रुचि-अभिरुचि तथा प्रवृत्तियों का विकास होता है।
8. बालक में वैयक्तिकता विकसित होती है।
9. प्रेम की शिक्षा मिलती है।
10. सहयोग, परोपकार, सहिष्णुता, कर्तव्य-पालन के गुण विकसित होते हैं।
11. घर बालक को समाज में व्यवहार करने की शिक्षा देता है।

प्लेटो के अनुसार, ''यदि आप चाहते हैं कि बालक सुन्दर वस्तुओं की प्रशंसा और निर्माण करे तो उसके चारों ओर सन्दर वस्तुएँ प्रस्तुत कीजिए।''

बाल विकास में बच्चों एवं बड़ों के आपसी सम्बन्ध
(RELATION BETWEEN CHILD AND ADULT IN CHILD DEVELOPMENT)

बालक परिवार से निकलकर दूसरे समूह तथा मित्र-मण्डली में जाकर खेलता है, जिससे बालक के सम्बन्ध बनने के साथ-साथ समूह व मित्र-मण्डली का प्रभाव भी पड़ता है। प्राय: व्यक्ति जिस स्थान पर निवास करता है उस समुदाय के द्वारा बाल विकास को पूर्णत: प्रभावित किया जाता है। बाल विकास के अनेक पक्ष ऐसे हैं जो कि वहाँ के पर्यावरण द्वारा प्रभावित होते हैं। क्योंकि बच्चों में अनुकरण की आदत पायी जाती है इसलिए समुदाय के व्यक्तियों में जिस प्रकार की आदतें होंगी उसका प्रत्यक्ष प्रभाव बच्चों पर अवश्य पड़ता है।

बाल विकास पर बड़ों एवं मित्र-समूह के सम्बन्धों का प्रभाव निम्न प्रकार से पड़ता है—

(1) शारीरिक विकास पर प्रभाव (Effect on Physical Development)—जिस समुदाय में शारीरिक विकास को महत्त्व देने वाले व्यक्ति निवास करते होंगे उस समुदाय में बच्चों के शारीरिक विकास को महत्त्व देने वाले निवास करते होंगे। उस समुदाय में बच्चों का शारीरिक विकास तीव्र गति से होगा तथा उनका स्वास्थ्य भी उत्तम होगा क्योंकि बच्चे समुदाय में रहने वाले व्यक्तियों से अनेक प्रकार से व्यायाम सीखेंगे।

(2) मानसिक विकास पर प्रभाव (Effect on Mental Development)—बालक जिस समूह में रहता है उसका मानसिक विकास का प्रभाव बालक पर भी पड़ता है जिससे बच्चों में चिन्तन व तर्क शक्ति का विकास होता है जिस समुदाय में वाद-विवाद कार्यक्रम, सांस्कृतिक कार्यक्रम एवं विज्ञान विषयों से सम्बन्धित कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं। उस समुदाय के बच्चों का मानसिक विकास तीव्र गति से होता है।

बाल-विकास में बच्चों के आपसी सम्बन्ध
↓
शारीरिक विकास पर प्रभाव
↓
मानसिक विकास पर प्रभाव
↓
संवेगात्मक विकास पर प्रभाव
↓
भाषायी विकास पर प्रभाव
↓
सामाजिक विकास पर प्रभाव
↓
नैतिक (चारित्रिक) विकास पर प्रभाव
↓
सृजनात्मकता का प्रभाव
↓
शैक्षिक विकास पर प्रभाव

चित्र—बाल विकास में बच्चों के आपसी सम्बन्ध

(3) संवेगात्मक विकास पर प्रभाव (Effect on Emotional Development)—जब बालक परिवार के सदस्यों एवं सगे-सम्बन्धियों में संवेग देखता है तो उसका प्रभाव बालक पर पड़ता है और बालक आए दिन विवाद एवं कलह देखता है, व्यक्तियों को क्रोध व चिन्तित अवस्था में देखता है तो उसका प्रभाव बच्चों के संवेगों पर पड़ता है।

(4) भाषायी विकास पर प्रभाव (Effect on Linguistic Development)—समुदायगत भाषायी दोषों का प्रभाव बच्चों के भाषायी विकास पर स्पष्ट रूप से पड़ता है। राजस्थान के पश्चिमी क्षेत्रों में क को कै तथा ख को खै बोलना समुदाय के प्रभाव को प्रदर्शित करता है। जिस समुदाय में भाषागत शुद्धता एवं स्पष्ट उच्चारण को ध्यान में रखा जाता है उसके बच्चे भी शुद्ध उच्चारण एवं स्पष्ट भाषा का प्रयोग करते हैं।

(5) सामाजिक विकास पर प्रभाव (Effect on Social Development)—सामाजिक व्यवस्था बालक के सामाजिक विकास को एक निश्चित रूप और दिशा प्रदान करती है। समाज के कार्य आदर्श और प्रतिमान बालक के दृष्टिकोणों का निर्माण करते हैं। जिस समुदाय में व्यक्ति सामाजिक गुणों से युक्त होते हैं तथा प्रेम व सहयोग की भावना से परस्पर व्यवहार करते हैं, उस समुदाय में बच्चों का विकास आदर्श रूप में होता है।

(6) नैतिक विकास पर प्रभाव (Effect on Moral Development)—समुदाय की गतिविधियों का बच्चों के चरित्र पर प्रभाव पड़ता है। समुदाय के व्यक्ति यदि चारित्रिक गुणों से युक्त होंगे तो बच्चे भी नैतिकता से पूर्ण एवं चरित्रवान होंगे। प्राय: चोर एवं शराब पीने वाले समुदाय में बच्चे चोरी एवं शराब पीना सीख जाते हैं क्योंकि उस समुदाय का प्रभाव उन पर प्रत्यक्ष रूप से पड़ता है। अत: समुदाय चारित्रिक एवं नैतिक विकास को निर्धारित करता है।

(7) सृजनात्मकता पर प्रभाव (Effect on Creativity)—जिस समुदाय में सृजन सम्बन्धी व्यवसाय को अपनाने वाले व्यक्तियों का बाहुल्य होगा, उस समुदाय में बच्चों की सृजनात्मकता का विकास तीव्र गति से होता है। चित्रकार एवं हस्त कौशल से युक्त समुदाय के बच्चे प्राय: चित्र बनाने में एवं अन्य वस्तुओं के सृजन में शीघ्र कुशल हो जाते हैं क्योंकि अधिकांश समय बच्चा जिस कार्य को देखता है उसको सीखने में कम समय लगता है।

(8) शैक्षिक विकास पर प्रभाव (Effect on Educational Development)—जिस समुदाय में व्यक्ति शिक्षित होते हैं तथा शिक्षा के महत्त्व को समझते हैं, उस समुदाय में शिक्षा की स्थिति सुदृढ़ होती है। इसका प्रभाव बच्चों पर भी पड़ता है। इस प्रकार के समुदाय में बच्चों का शैक्षिक विकास तीव्र गति से होता है। इसके विपरीत अशिक्षित समुदाय में शिक्षा के महत्त्व को व्यक्ति नहीं समझते हैं तथा बच्चों की शिक्षा पर ध्यान नहीं देते हैं। इस स्थिति में बच्चों का शैक्षिक विकास उचित नहीं होता है।

III. पड़ोस
(NEIGHBOURHOOD)

समाजीकरण की प्रक्रिया में पड़ोस का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। पड़ोसियों के सम्पर्क में आने से व्यक्ति के सामने अनेक नवीन विचार आते हैं। बातचीत तथा गप्पबाजी के दौरान व्यवहार के नये ढंग उसका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करते हैं तथा उसे नये-नये आदर्शों से परिचित होने का अवसर मिलता है।

परिवार में माता-पिता को घर एवं पास-पड़ोस में ऐसा माहौल बनाने की जरूरत है जिसमें भय, ईर्ष्या, विवाद, अराजकता, पक्षपात, उलझन को स्थान न हो। यह प्रेमपूर्ण माहौल केवल अपने घर में ही नहीं बल्कि पास-पड़ोस में भी बनाने की जरूरत है क्योंकि बच्चे के व्यक्तित्व विकास पर पड़ोस की भी छाप पड़ती है। हर माता-पिता का यह लक्ष्य होना चाहिए उनका बच्चा उनसे एक कदम आगे हो, अच्छे माहौल में पढ़ने-बढ़ने से यह सम्भव हो सकता है।

बच्चा जब छोटा होता है तब वह अपने आस-पास जो कुछ देखता है उसे अनुकरण करता है, अनुकरण समाजीकरण की प्रमुख सीढ़ी है। जैसे-जैसे बालक बड़ा होता है अपने आस-पास विभिन्न लोगों के सम्पर्क में आता है और उनके व्यवहार का अनुकरण करके सामाजिक बनता है।

ज्यादातर बच्चे अपने घर-परिवार आस-पड़ोस, सगे-सम्बन्धियों, मित्रों के अनुसार व्यवहार को ग्रहण करते हैं इसे तादात्मीकरण कहते हैं। वे विभिन्न रीति-रिवाजों, परम्पराओं, अधिकारों, कर्तव्य की भावनाओं द्वारा अपने ज्ञान में वृद्धि करते हैं।

IV. बच्चों के समाजीक्रण में जेण्डर एवं समुदाय की भूमिका
(ROLE OF GENDER AND COMMUNITY IN SOCIALIZATION OF CHILDREN)

लिंग हेतु अंग्रेजी में 'Gender' शब्द प्रयुक्त किया जाता है। लिंग से तात्पर्य स्त्री–पुरुष से है। व्याकरण में भी लिंग का उल्लेख स्त्रीलिंग, पुल्लिंग एवं नपुंसकलिंग के रूप में मिलता है। कुछ इसी प्रकार हमारे समाज में भी लिंगीय व्यवस्था है जिनमें स्त्री तथा पुरुष दो लिंग हैं, अभी हाल ही में तृतीय लिंग (Third Gender) को भी मान्यता प्राप्त हुई है।

भारत में लिंगीय अवधारणा प्राचीन काल में स्वस्थ थी। बालक एवं बालिकाओं में भेदभाव नहीं किया जाता था तथा बराबरी का अधिकार प्राप्त था। परन्तु बाद में लिंगीय अवधारणा अत्यधिक जटिल और दूषित हो गई जिस कारण से स्त्रियों को पुरुषों की अपेक्षा हीन समझकर उनके अधिकारों में कमी आने लगी। वर्तमान में शिक्षा के द्वारा जागरूकता का प्रसार करके स्वस्थ लैंगिक दृष्टिकोण की शिक्षा प्रदान की जा रही है।

समाजीकरण में लिंग–भेद का प्रभाव (Effect of Gender-bias in Socialization)

समाजीकरण की क्रिया पर लिंग–भेद का भी प्रभाव पड़ता है। बच्चा लड़का है या लड़की यह भी समाजीकरण की गति निर्धारित करता है। अधिकतर देखने में आया है कि लड़कियों में समाजीकरण की प्रक्रिया लड़कों की अपेक्षा अधिक तीव्र होती है। वह अधिक सभ्य, संस्कारी व सामाजिक मूल्यों को महत्त्व देने वाली होती हैं। वह सामाजिक मूल्यों को जल्दी व बिना किसी तर्क के आसानी से अपनाने लगती हैं जबकि लड़कों में यह अपेक्षाकृत धीमी होती है।

वह सामाजिक मूल्यों को अपनाने की अपेक्षा तोड़ने में अधिक विश्वास रखते हैं। देखने में आता है कि बेटों की अपेक्षाकृत बेटियाँ माता–पिता व रिश्तेदारों को अधिक सम्मान देती हैं। लड़के जिन मूल्यों को दबाव में अपनाते हैं लड़कियाँ वहीं सामाजिक मूल्यों को प्रेम सहित अपनाती हैं। इस कारण लड़के का समाजीकरण लड़कियों की अपेक्षा धीमा होता है।

बालक व बालिकाओं में विषम लिंगी आकर्षण होता है। सामान्य रूप से बालिकाएँ अपने पिता से प्रेम करती हैं और बालक अपनी माता से। बालकों में अपने समूह का मुखिया बनने जैसी प्रवृत्ति पाई जाती है वहीं बालिकाएँ स्वभाव से लज्जालू होती हैं। इन्हीं कारणों से दोनों के सामाजिक विकास में अन्तर होता है।

बच्चों के समाजीकरण में समुदाय की भूमिका (Role of Community in Socialization of Children)

प्रत्येक व्यक्ति एक या अनेक समूहों और संस्थाओं का सदस्य होता है। इन समूहों की सदस्यता द्वारा अपनी राष्ट्रीय या क्षेत्रीय संस्कृति में व्यक्ति भाग लेते हैं। कुछ तो समूह औपचारिक ढंग से निर्मित होते हैं और कुछ पूर्ण रूप से अनौपचारिक होते हैं। न केवल प्रत्येक व्यक्ति का प्रत्येक समूह में एक छोटे रूप से समाजीकरण होता है वरन् यह अनुभव मिलकर विस्तृत संस्कृति में समाजीकरण के भाग बन जाते हैं। इस प्रकार संस्कृति अनेक समूहों की, जो समाजीकरण की प्रक्रिया में निहित प्रकार की सदस्यता के बीच की कड़ी है। यद्यपि अभिभावक बालक प्रक्रिया के परिणामस्वरूप अभिवृत्तियाँ विकसित होती हैं तथापि अनेक विशिष्ट अभिवृत्तियाँ विभिन्न समूहों की ओर तुलनात्मक वफादारी के आधार पर आकृति ग्रहण करती हैं।

मैकाइवर एवं पेज के अनुसार, समुदाय उस छोटे या बड़े समूह को कहते हैं, जिसके सभी सदस्य किसी क्षेत्र की सीमा में इस प्रकार समग्र जीवन बिताते हैं कि वे किसी विशेष हित की पूर्ति मात्र ही नहीं, बल्कि सामान्य जीवन की सभी बुनियादी शर्तों की पूर्ति में पारस्परिक सहयोग करते हैं।

स्कूल को समाज का लघु रूप की संज्ञा दी जाती है। समुदाय शिक्षा संस्था के रूप में बालक को औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों रूप से शिक्षित करता है। बालक की शिक्षा में समुदाय का अहम् महत्त्व है। बालक जन्म से लेकर केवल पारिवारिक वातावरण में ही विकसित नहीं होता अपितु उसके विकास में समुदाय के विस्तृत वातावरण का भी गहरा प्रभाव पड़ता है। समुदाय के वातावरण में रहते हुए बालक की प्रवृत्ति, विचारधारा तथा आदतों का निर्माण होता है एवं उसकी संस्कृति, रहन–सहन तथा भाषा पर एक अमिट छाप दिखाई देती है।

बालक के शारीरिक विकास, मानसिक विकास, सांस्कृतिक विकास, चारित्रिक तथा नैतिक विकास एवं व्यावसायिक विकास पर समुदाय का प्रभाव पड़ता है।

समुदाय को दो प्रकारों में विभाजित किया जाता है—

(1) ग्रामीण समुदाय (2) नगरीय समुदाय।

बाल अधिकारों का सन्दर्भ
(CONTEXT OF CHILDREN RIGHTS)

बाल अधिकार (Children Rights)—बाल अधिकार नाबालिगों की देखभाल और विशिष्ट सुरक्षा के रूप में बच्चों को मिलने वाले व्यक्तिगत मानव अधिकारों को कहा जाता है। बाल अधिकार 1989 की परिभाषा के अनुसार, ''कोई भी व्यक्ति जिसकी आयु 18 वर्ष से कम है जब तक कि नियम में परिभाषित वयस्कता को पहले प्राप्त नहीं किया हो'', बच्चा कहलाता है।

देश में निर्मित तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बने जिन कानूनों को भारत में स्वीकार किया गया है, उसके अन्तर्गत निर्धारित मानक और अधिकारों को पाने का अधिकार उन सभी व्यक्तियों को है जिनकी उम्र 18 वर्ष से कम है।

भारतीय संविधान

भारतीय संविधान में सभी बच्चों के लिए कुछ अधिकार निश्चित किए हैं जिसे विशेष रूप से संविधान में शामिल किया है, वे अधिकार इस प्रकार हैं—

- 6-14 वर्ष की आयु समूह वाले सभी बच्चों को अनिवार्य और नि:शुल्क प्रारम्भिक शिक्षा का अधिकार (अनुच्छेद-21 ए)
- 14 वर्ष की उम्र तक के बच्चे को किसी भी जोखिम वाले कार्य से सुरक्षा का अधिकार (अनुच्छेद-24)
- आर्थिक जरूरतों के कारण जबरन ऐसे कामों में भेजना जो उनकी आयु या क्षमता के उपयुक्त नहीं है, उससे सुरक्षा का अधिकार (अनुच्छेद-39 ई)
- समान अवसर व सुविधा का अधिकार जो उन्हें स्वतन्त्र एवं प्रतिष्ठापूर्ण माहौल प्रदान करे और उनका स्वस्थ रूप से विकास हो सके, साथ ही नैतिक एवं भौतिक कारणों से होने वाले शोषण से सुरक्षा का अधिकार (अनुच्छेद-39 एफ)

साथ ही उन्हें भारत के वयस्क पुरुष एवं महिला के बराबर समान नागरिक का अधिकार भी प्राप्त है; जैसे—

- समानता का अधिकार (अनुच्छेद-14)
- भेदभाव के विरुद्ध अधिकार (अनुच्छेद-15)
- व्यक्तिगत स्वतन्त्रता और कानून की सम्यक् प्रक्रिया का अधिकार (अनुच्छेद-21)
- जबरन बन्धुआ मजदूरी रखने के विरुद्ध सुरक्षा का अधिकार (अनुच्छेद-23)
- सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से समाज के कमजोर तबकों के सुरक्षा का अधिकार।

भारत में सभी बच्चों के लिए वास्तविक मानव अधिकार के पुनर्विचार के लिए 20 नवम्बर को हर वर्ष बाल अधिकार दिवस के रूप में मनाया जाता है। बाल अधिकारों के अनुसार बचपन अर्थात् उनके शारीरिक और मानसिक अपरिपक्वता के दौरान बच्चों की कानूनी सुरक्षा, देखभाल और संरक्षण करना बहुत जरूरी है।

बाल अधिकार
(CHILD RIGHTS)

नाबालिगों की देखभाल और विशिष्ट सुरक्षा के रूप में बच्चों को मिलने वाले व्यक्तिगत मानवाधिकारों को कहा जाता है। बाल अधिकार सम्मेलन, 1989 की परिभाषा के अनुसार, ''कोई भी व्यक्ति जिसकी आयु 18 वर्ष से कम है, जब तक कि नियम में परिभाषित वयस्कता को पहले प्राप्त नहीं किया हो'', बच्चा कहलाता है।

1. शिक्षा एक मौलिक और मानवाधिकार (Education a Fundamental and Human Rights)

शिक्षा एक मौलिक और मानव अधिकार है। यह व्यक्ति और समाज के रूप में विकास के लिए महत्त्वपूर्ण है।

(अ) मौलिक अधिकार के रूप में शिक्षा (As a Forms of Fundamental Rights)—भारत में प्रत्येक नागरिक को प्राथमिक शिक्षा पाने का अधिकार है। इस सम्बन्ध में प्रारम्भिक शिक्षा निःशुल्क हो, प्रारम्भिक शिक्षा अनिवार्य हो तथा तकनीकी व व्यावसायिक शिक्षा को सर्वसुलभ बनाये जाए एवं उच्च शिक्षा सभी की पहुँच के भीतर हो।

शिक्षा का उपयोग मानव व्यक्तित्व के सम्पूर्ण विकास के लिए किया जाना चाहिए।

(ब) सबके लिए शिक्षा (Education for All)—शिक्षा के महत्त्व पर ग्रामीण लोगों को प्रेरित किये जाने की आवश्यकता है। निम्न सूचनाएँ लोगों के लिए समाधान प्रदान करेंगी—

1. बालिका शिक्षा,
2. बाल-मजदूरों के लिए शिक्षा एवं संयोजक पाठ्यक्रम,
3. अनुसूचित जाति, जनजाति, पिछड़े वर्ग व अल्पसंख्यकों के लिए शिक्षा,
4. शारीरिक व मानसिक रूप से विकलांग, अपंग एवं विशेष बच्चों के लिए शिक्षा,
5. शिक्षा व महिलाएँ।

2. बाल अधिकार सम्मेलन (Children Rights Conference)

बच्चों के अधिकारों के संरक्षण पर जागरूकता पैदा करने और अच्छे स्वास्थ्य के साथ बढ़ने में सहायता करे और सीखने के अवसर प्रदान करे और उन्हें स्नेह दे।

1. बच्चों के अधिकार से सम्बन्धित अनुच्छेद-1 से अनुच्छेद-12 तक।
2. जीने और विकास करने का अधिकार—अनुच्छेद 7 से 9, 20, 22, 23, 24, 25, 26, 27, 28, 29, 30, 31 तथा 42।
3. सहभागिता का अधिकार।

3. राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग (National Children Rights Protection Commission)

इस अधिकार के अन्तर्गत राष्ट्रीय बाल संरक्षण आयोग ने बाल अधिकारों के संरक्षण और उनके प्रभावी कार्यान्वयन के उपायों की सिफारिश की है।

4. बाल अधिकार और संरक्षण (Children Rights and Protection)

राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग ने बाल अधिकारों के संरक्षण और उनके प्रभावी कार्यान्वयन के लिए उपायों की सिफारिश की है, शिक्षक, खेत मजदूर और उन लोगों के लिए है जो बाल अधिकार और बाल संरक्षण के क्षेत्र में सक्रिय हैं।

बालश्रम
(CHILD LABOUR)

इस भाग में बालश्रम की उत्पत्ति तथा उससे जुड़ी चुनौतियों के साथ संविधान द्वारा प्रदत्त सुरक्षा की जानकारी के साथ विषय से जुड़े अनेक पहलुओं को प्रस्तुत किया गया।

बाल सम्बन्धित कानून (Child related Law)

1. बाल अधिकार समिति की निश्चायक टिप्पणियाँ
2. संशोधन अधिनियम, 1956 अनैतिक व्यापार रोकथाम
3. शिशुओं एवं छोटे बच्चों के आहार सम्बन्धी
4. शिशु दुग्ध अनुकल्प सम्बन्धी

5. शिशु दुग्ध अनुकल्प, पोषण बोतल एवं शिशु खाद्य (उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण का विनियम) संशोधन, 2003
6. बाल विवाह निषेध अधिनियम, 1929
7. बाल अधिकार संरक्षण आयोग, 2006
8. राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण नियमावली, 2006
9. बाल अधिकार संरक्षण आयोग, 2005
10. किशोर न्याय (बच्चों की देखरेख और संरक्षण)
11. बच्चों का लैंगिक अपराधों से संरक्षण।

भारत में बाल सुरक्षा (Child Safety in India)

परिवार समाज की केन्द्रीय इकाई है और बच्चों के विकास का सबसे बड़ा स्रोत है। यह बच्चों को पोषण, भावनात्मक बन्धन और सामाजिकता प्रदान करता है। बच्चों के राष्ट्रीय नीतियों में कहा गया है कि बच्चे हमारे राष्ट्र की एक सर्वोपरि महत्त्वपूर्ण सम्पत्ति हैं, इसलिए यह सभी की जिम्मेदारी है कि—

- बच्चों की भागीदारी के अधिकारों का सम्मान करें।
- विशेष रूप से असुरक्षित समूहों की रक्षा करना।
- भविष्य में बच्चों की आवासीय संस्थाओं की गुणवत्ता में सुधार प्रक्रिया पर जोर देना, बच्चों की सहभागिता और साथ ही समुदाय पथ प्रधान और परिवार आधारित विकल्पों को विकसित किया जाना चाहिए और यह महत्त्वपूर्ण है कि संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार कन्वेंशन एक उद्देश्य की घोषणा से बाल अधिकार को सुनिश्चित करने का एक प्रभावी औजार में बदल गया है।

उपेक्षित वर्गों से आने वाले बच्चों पर विशेष चर्चा के साथ
(SPECIAL DISCUSSION ON CHILDREN OF NEGLECTED CLASSES)

कमजोर वर्ग का प्रयोग प्रारम्भ में अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लिए होता था, लेकिन बाद में आर्थिक रूप से पिछड़े लोग, महिलाओं एवं अन्य पिछड़े वर्ग, विकलांग, झुग्गी-झोंपड़ी में रहने वाले लोग एवं समाज के सीमान्त समूहों को भी इसमें शामिल कर लिया गया है।

दलित शब्द का प्रयोग उन जातीय समूहों के लिए किया जाता है जो वर्ण व्यवस्था से बाहर एवं हिन्दू सामाजिक संरचना सोपान में सबसे निम्न स्थान रखते हैं। निम्नतम स्थान का आधार इनके व्यवसाय से जुड़ा है जिसे अपवित्र समझा जाता है। अपवित्र व्यवसाय के कारण इन जातियों को अछूत (अस्पृश्य) समझा जाता है जिनके कारण इन्हें सामाजिक वंचना एवं निर्योग्यताओं का सामना करना पड़ता है। परिणामस्वरूप सार्वजनिक स्थलों; जैसे—मन्दिर में पूजा करना, तालाब में स्नान करना, आदि की मनाही थी। निम्न सामाजिक आर्थिक स्थिति होने के कारण ये जातियाँ सदियों से भेदभाव एवं शोषण का शिकार रही हैं। भारतीय संविधान में इन्हें अनुसूचित जाति के नाम से जाना जाता है। 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या में इनका प्रतिशत 16·66% है। उत्तर प्रदेश में सबसे अधिक अनुसूचित जाति की जनसंख्या है।

दलितों (अनुसूचित जातियों) की समस्याएँ [Problems of Dalits (SC/ST Tribes)]

1. अस्पृश्यता की समस्या
2. निर्धनता की समस्या
3. शोषण की समस्या
4. शिक्षा की समस्या
5. निम्न जीवन-स्तर की समस्या
6. स्वास्थ्य एवं मूलभूत सुविधाओं की समस्या
7. बेरोजगारी की समस्या

दलितों की समस्याओं का समाधान (Solution of Dalits' Problems)

दलितों के समाधान के लिए अनेक दलित सुधार आन्दोलन हुए। दलित चेतना के विकास का प्रारम्भिक प्रयास दक्षिण भारत में देखने को मिलता है जहाँ वासव नामक व्यक्ति ने सामाजिक प्रतिबन्धों को हटाकर

सामाजिक सुधार का प्रयास किया, जो ब्राह्मण थे। इसके बाद भारत के विभिन्न दलित चिन्तकों ने आन्दोलन द्वारा दलित चेतना का विकास किया जिसे हम ज्योतिबा फूले से डॉ. भीमराव आंबेडकर की सामाजिक-सांस्कृतिक तथा राजनीतिक यात्रा में देख सकते हैं।

समाज के वे लोग जिन्हें समाज में सन्तोषजनक सामाजिक सांस्कृतिक व आर्थिक दर्जे से वंचित रखा जाता है उन्हें सामाजिक, सांस्कृतिक व आर्थिक दृष्टि से वंचित वर्ग कहा जाता है।

समाजीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति को समाज अपनी परम्पराओं, मान्यताओं तथा आदर्शों के अनुसार बनाता है तथा स्वीकृति प्रदान करता है।

इस प्रकार समाजीकरण का अर्थ उस प्रक्रिया से है जिसके द्वारा व्यक्ति अन्य व्यक्तियों से अन्तःक्रिया करता हुआ सामाजिक आदर्शों, रीति-रिवाजों तथा परम्पराओं को सीखता है समाजीकरण में किसी सुविधा को किसी व्यक्ति से अलग कर दिये जाने पर या न प्राप्ति होने पर वह वंचित वर्ग के रूप में जाना जाता है।

''समाज के वे लोग जिन्हें समाज में सन्तोषजनक सामाजिक सांस्कृतिक व आर्थिक दर्जे से वंचित रखा जाता है उन्हें सामाजिक, सांस्कृतिक व आर्थिक दृष्टि से वंचित वर्ग कहा जाता है।

समाजीकरण में वंचित वर्ग के प्रकार
(TYPES OF DEPRIVED IN SOCIALIZATION)

सामाजिक दृष्टि से और समाजीकरण में वंचित वर्ग को निम्न प्रकार से बताया गया है—

1. सामाजिक दृष्टि से वंचित (Socially Deprived),
2. आर्थिक दृष्टि से वंचित (Economically Deprived),
3. सांस्कृतिक दृष्टि से वंचित (Culturally Deprived)।

1. सामाजिक दृष्टि से वंचित
(SOCIALLY DEPRIVED)

भारत में अनेक जातियाँ (सामाजिक रूप से पिछड़े वर्ग) जनजातियाँ हैं। इनमें शूद्रों को निम्न जाति का माना गया और देश में कुछ समय पूर्व तक उन्हें छूना ही अछूत माना जाता था। अतः अस्पृश्यता भारत का एक सामाजिक कलंक बन गया। सामाजिक रूप से वंचित वर्ग सामाजिक दृष्टि से निर्बल होने के कारण आर्थिक दृष्टि से भी निर्बल व वंचित हो गया।

भारत के संविधान के भाग 4 में प्रस्तुत राज्य के नीति-निदेशक सिद्धान्त में अनुच्छेद 45 के तहत प्राथमिक शिक्षा को निःशुल्क और अनिवार्य रूप से देश के सभी बच्चों को उपलब्ध कराने का प्रावधान भी किया गया। इसके बाद देश की पहली राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1968 में भी सरकार के इसी प्रकार के इरादे को दोहराया गया। इसके बाद 1986 में देश की राष्ट्रीय शिक्षा नीति तथा संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1991 तथा राष्ट्रीय शिक्षा नीति की कार्य योजना, 1992 में भी देश के सभी 10 वर्ष तक के बच्चों को 21वीं शताब्दी में जाने से पूर्व शिक्षित किये जाने हेतु बहुत प्रयत्न करने की बात कही गयी। तत्पश्चात् बाद में वर्ष 1993 के उन्नीकृष्णन केस पर अपना ऐतिहासिक फैसला देते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने यह स्वीकार किया कि शिक्षा का अधिकार प्रत्येक भारतीय नागरिक का मूल अधिकार है और इसलिए इसे मूल अधिकार में सम्मिलित किये जाने हेतु सरकार को निर्देश भी जारी किए। इस सम्बन्ध में वर्ष 1997 में 86वाँ संविधान संशोधन बिल भी राज्यसभा में प्रस्तुत किया गया जिसके द्वारा प्राथमिक शिक्षा को बच्चों का भौतिक अधिकार और इसकी समुचित व्यवस्था करना सरकार का मौलिक दायित्व निर्धारित किया गया जिसे संसद के दोनों सदनों ने वर्ष 2002 में पारित किया था। तत्पश्चात् 7 वर्षों के अन्तराल के बाद अप्रैल 2010 को लागू किया गया।

2. आर्थिक रूप से वंचित वर्ग
(ECONOMICALLY DEPRIVED)

भारत में अत्यधिक गरीबी है। जनसंख्या का एक बड़ा भाग गरीबी रेखा के नीचे है जो अपना जीवन-यापन कर रहा है। गरीब व्यक्ति अपने लिए और अपने बच्चों के भरण-पोषण में भी अपने को कभी-कभी असमर्थ पाता है।

गरीब माँ-बाप अपने बच्चे को स्कूल नहीं भेज पाते। वे बच्चों से घर का काम लेते हैं। यदि बच्चे खेती पर उनके रोजगार में सहायता न करें तो उन्हें और उनके परिवार को दो समय का भोजन भी न मिले इसलिए वे अपने बच्चों को स्कूल नहीं भेजते।

यदि वे बच्चों को स्कूल भेजना भी चाहते हैं तो बच्चों की कॉपी-किताब के लिए भी उनके पास पैसे नहीं होते हैं।

भारत ने पंचवर्षीय योजनाओं में गरीबी उन्मूलन के प्रयास किये हैं। गरीबी उन्मूलन के बारे की बैसाखी से स्वतन्त्र भारत में कई सरकारें सत्तारूढ़ हुई हैं। किन्तु इस दिशा में प्रगति बहुत धीमी रही है। हमारे शिक्षा आयोगों ने इसके लिए अनेक महत्त्वपूर्ण सुझाव दिये थे। शिक्षा नीतियों में भी इस ओर ध्यान दिया गया है।

संविधान में 6 से 14 वर्ष के बालकों के लिए शिक्षा को अनिवार्य बनाने का निर्देश था और इस लक्ष्य को 4 वर्ष में प्राप्त करना था। संविधान के लागू होने के इतने वर्ष बाद भी आज तक इस लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर पाये हैं।

केन्द्र सरकार ने राज्यों से प्राथमिक स्तर तक सभी छात्रों को मुफ्त किताबें देने के निर्देश दिये हैं, जिसे कुछ राज्यों ने पूर्णत: और किसी ने अंशत: लागू किया है। धन की समस्या ने अनिवार्य नि:शुल्क शिक्षा में कठिनाई उत्पन्न की है। इन कठिनाइयों पर विजय पाने के लिए हमने विश्व बैंक एवं अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों से भी सहायता प्राप्त की है।

हम आशा करते हैं कि बारहवीं पंचवर्षीय योजना के अन्त तक हम आर्थिक रूप से वंचित छात्रों को अनिवार्य नि:शुल्क शिक्षा देने में समर्थ हो सकेंगे।

3. सांस्कृतिक रूप से वंचित वर्ग
(CULTURALLY DEPRIVED)

सांस्कृतिक रूप से वंचित वर्ग के लोगों को धार्मिक स्थानों पर पूजा के लिए नहीं घुसने देते। वे मन्दिर में ईश्वर के सामने पूजा नहीं कर सकते। यह स्थितियाँ उन्हें अन्य लोगों से अलग कर देती हैं और वे भारतीय संस्कृति की जानकारी से वंचित रहते हैं।

इसी के आधार पर भारत में वंचित वर्ग का विस्तार होता जा रहा है जिससे समाजीकरण में विभिन्नताएँ भी हो रही हैं।

विश्व मानवीय अधिकार
(WORLD HUMAN RIGHTS)

संयुक्त राष्ट्र संघ ने विश्व मानवीय अधिकारों के अन्तर्गत निम्नलिखित क्षेत्रों में समान अवसरों की अवधारणा को स्वीकार किया है—

चित्र—विश्व मानवीय अधिकार

(1) नागरिक अधिकार (Citizen Rights)—मानवीय अधिकारों की घोषणा में विश्व के प्रत्येक नागरिक को निम्नलिखित अधिकार प्रदान किये गये हैं—

1. किसी भी व्यक्ति को यातनापूर्ण, बर्बर, दण्ड प्रदान नहीं किया जा सकता।

2. सभी प्राणी जन्म से स्वतन्त्र हैं तथा वे आत्मसम्मान एवं अधिकारों के सन्दर्भ में एकसमान हैं।

3. प्रत्येक व्यक्ति को जीवन जीने का अधिकार है। साथ ही स्वतन्त्रता एवं सुरक्षा का भी अधिकार है।

4. सभी कानून के समक्ष एक समान हैं तथा उनको कानून को समान रूप से संरक्षण प्रदान करना चाहिए।

5. किसी भी व्यक्ति को नौकर या गुलाम बनाकर नहीं रखा जा सकता।

6. किसी व्यक्ति को मनमाने ढंग से कैदी, बन्दी तथा निर्वासित नहीं किया जा सकता।

7. प्रत्येक व्यक्ति अपने राष्ट्र की सीमा में कहीं भी स्थायी रूप से निवास करने के लिए स्वतन्त्र है।

8. प्रत्येक व्यक्ति को अपने देश को छोड़ने का तथा पुनः वापस लौटने का अधिकार प्राप्त है।

9. प्रत्येक व्यक्ति को स्वतन्त्र अभिव्यक्ति एवं मत प्रदान करने का अधिकार है।

10. प्रत्येक व्यक्ति को शान्तियुक्त तरीके से एकत्रित होने के अधिकार हैं। किन्तु किसी भी व्यक्ति को उस समूह/दल में बलपूर्वक सम्मिलित नहीं किया जा सकता।

(2) राजनीतिक अधिकार (Political Rights)—संयुक्त राष्ट्र संगठन (UNO) के मानवीय अधिकारों की धारा 14, 15, 21 के अन्तर्गत निम्नलिखित राजनीतिक अधिकारों को मान्यता दी गई है—

1. प्रत्येक व्यक्ति अपने राष्ट्र की सरकार में सक्रिय सहभागिता कर सकता है। वह प्रत्यक्ष रूप से भी हो सकती है अथवा चुने हुए प्रतिनिधियों के द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से भी हो सकती है।

2. प्रत्येक व्यक्ति को प्रदत्त जन सेवाओं का लाभ प्राप्त करने के लिए समान रूप से अधिकार है।

3. किसी भी राष्ट्र में सरकार की स्थापना वहाँ के निवासियों की ''इच्छा शक्ति'' पर निर्भर करेगी। इसके लिए आवर्ती चुनावों तथा गुप्त मतदान का सहारा लिया जा सकता है।

4. प्रत्येक व्यक्ति को अपने राष्ट्र की नागरिकता का अधिकार प्राप्त है। किसी भी व्यक्ति को इसे त्यागने छीनने हेतु बलपूर्वक प्रयास नहीं किया जा सकता है।

5. प्रत्येक व्यक्ति को अन्य देशों में शरण ग्रहण करने का अधिकार प्राप्त है।

(3) आर्थिक अधिकार (Economic Rights)—धाराएँ 17, 22, 23, 24 तथा 25 आर्थिक रूप से स्वतन्त्रता प्रदान करने के लिए मानवीय अधिकारों की घोषणा करती हैं। संक्षेप में उनको निम्न प्रकार बताया जा सकता है—

1. प्रत्येक व्यक्ति को अपनी सम्पत्ति रखने का अधिकार प्राप्त है। वह स्वयं या किसी अन्य व्यक्ति की सम्पत्ति पर नियोजन करे। किसी भी व्यक्ति को मनमाने ढंग से उसकी सम्पत्ति से वंचित करने का अधिकार नहीं है।

2. प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा का अधिकार है। इसके अन्तर्गत प्रत्येक राष्ट्र को अपने नागरिक को सामाजिक जीवन-निर्वाह हेतु आर्थिक भत्ते की व्यवस्था करना अनिवार्य है जबकि वह अशक्त रोगी या बेरोजगार है।

3. प्रत्येक व्यक्ति को कार्य करने का अधिकार है। साथ ही राष्ट्र को उसकी बेरोजगारी से रक्षा करने का अधिकार है।

4. प्रत्येक व्यक्ति को समान कार्य हेतु समान वेतन प्राप्त करने का अधिकार है।

5. प्रत्येक व्यक्ति को उचित मानदण्डों के अनुरूप जीवनयापन तथा स्वास्थ्यप्रद जीवन जीने का अधिकार है।

6. प्रत्येक व्यक्ति को विश्राम एवं मनोरंजन का अधिकार है।

7. प्रत्येक व्यक्ति को अपने अधिकारों की माँग तथा सुरक्षा हेतु ट्रेड की सदस्यता ग्रहण करने का अधिकार है।

(4) सामाजिक अधिकार (Social Rights)—मानवीय अधिकारों के घोषणा पत्र में निम्नलिखित सामाजिक अधिकारों का उल्लेख किया गया है—

1. राष्ट्रों द्वारा निर्धारित निश्चित आयु वर्ग में प्रत्येक युवक-युवती को पारस्परिक पसन्द से विवाह करके परिवार स्थापित करने का अधिकार है।

2. परिवार किसी राष्ट्र एवं समाज की आधारभूत इकाई है। अत: राष्ट्र द्वारा उसकी सुरक्षा एवं परिपोषण की व्यवस्था करना अनिवार्य है।

3. मातृत्व एवं बाल्यावस्था की देखभाल हेतु विशेष प्रयास करना प्रत्येक राष्ट्र का दायित्व है।

4. प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार प्राप्त है। इसलिए प्रारम्भिक शिक्षा अनिवार्य रूप से शुल्क मुक्त होनी चाहिए।

5. शिक्षा का आयोजन इस प्रकार से किया जाये कि वह विभिन्न जातियों, धर्मों के व्यक्तियों के मध्य पारस्परिक, स्नेह, मित्रता उत्पन्न करने वाली हो।

(5) सांस्कृतिक अधिकार (Cultural Rights)—मानवीय अधिकारों की घोषणा में निम्नलिखित सांस्कृतिक अधिकारों का समावेश किया जाता है—

1. प्रत्येक व्यक्ति अपने सामुदायिक क्रियाकलापों में सहभागिता हेतु स्वतन्त्र है। अन्य शब्दों में प्रत्येक व्यक्ति अपने कौशलों के माध्यम से आनन्द की अनुभूति कर सकता है तथा वैज्ञानिक उन्नति में सक्षम योगदान दे सकता है।

2. प्रत्येक राष्ट्र के व्यक्ति को अपनी सांस्कृतिक धरोहर के संरक्षण, सम्प्रेषण तथा सुरक्षा का अधिकार है चाहे यह वैज्ञानिक, वस्तुगत या साहित्यिक है।

समावेशन में अनुप्रयोग
(APPLICATION IN INCLUSION)

(विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के विशेष सन्दर्भ में)

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के सन्दर्भ में राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2006 की घोषणा की गई जिसमें विकलांगों के लिए महत्त्वपूर्ण आवश्यकताओं को बताया जो निम्न प्रकार हैं—

असमर्थ व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति–2006
(NATIONAL POLICY FOR DISABILITY PERSON-2006)

ये निम्न हैं—

1. सामाजिक व आर्थिक विकास के लिए शिक्षा सबसे उपयोगी माध्यम है। संविधान के अनुच्छेद में शिक्षा को मूलभूत अधिकार माना गया है तथा नि:शक्त व्यक्ति अधिनियम, 1995 की धारा 26 के अनुसार कम–से–कम 18 वर्ष की आयु के सभी विकलांग बच्चों को नि:शुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध करायी जाती है। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार लगभग 55% विकलांग व्यक्ति अनपढ़ हैं। विकलांग व्यक्तियों को समावेशी शिक्षा के माध्यम से सामान्य शिक्षा पद्धति की मुख्य धारा में लाए जाने की जरूरत है।

2. सरकार द्वारा सर्वशिक्षा अभियान शुरू किया गया है जिसका उद्देश्य 6 से 14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों के लिए 2015 तक 8 वर्ष की प्राथमिक स्कूली शिक्षा प्रदान करना था। इन बच्चों में विकलांग बच्चे भी सम्मिलित हैं। 15-18 वर्ष की आयु वर्ग के विकलांग बच्चों को एकीकृत शिक्षा योजना (IEDC) के अन्तर्गत नि:शुल्क शिक्षा दी जाती है।

3. भारत सरकार विकलांग छात्रों को स्कूल स्तर के बाद अध्ययन करने के लिए छात्रवृत्तियाँ प्रदान करती है।

4. विकलांग व्यक्तियों को उच्च व व्यावसायिक शिक्षा हेतु विश्वविद्यालय तकनीकी संस्थाओं तथा उच्च शिक्षा की अन्य संस्थाओं में अनेक सुविधाएँ प्रदान की जाती हैं।

5. सुविधा रहित तथा अल्प सुविधा वाले क्षेत्रों में विद्यमान संस्थाओं को अनुकूल बनाकर या संस्थाओं की शीघ्र स्थापना करके विभिन्न प्रकार के उत्पादकारी क्रियाकलापों के अनुरूप विकलांग व्यक्तियों में कौशल विकास बढ़ाने के लिए तकनीकी तथा व्यावसायिक शिक्षा की सुविधाओं को प्रोत्साहित किया जाता है। व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए गैर–सरकारी संगठनों को भी प्रोत्साहित किया जाता है।

6. राज्य सरकारें, स्वायत्त निकायों तथा स्वैच्छिक संगठनों द्वारा कार्यान्वित की जाने वाली 'IEDC' योजना के अन्तर्गत विशेष शिक्षकों, पुस्तकों और स्टेशनरी, वर्दी, परिवहन, दृष्टि विकलांगों के लिए रीडर

भत्ता, हॉस्टल भत्ता, अनुदेशन सामग्री की खरीद या उत्पादन, सामान्य शिक्षकों का प्रशिक्षण, आदि विभिन्न सुविधाओं के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है।

7. विकलांग महिलाओं की विशेष जरूरतों का ध्यान रखते हुए उनके लिए शिक्षा, रोजगार तथा अन्य पुनर्वास सेवाएँ प्रदान करने हेतु विशेष कार्यक्रम बनाये गये हैं। विकलांग महिलाओं के लिए विशेष शैक्षिक एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण सुविधाओं की व्यवस्था की जाती है।

विकलांग व्यक्तियों की शिक्षा
(EDUCATION OF PERSON WITH DISABILITY)

विकलांग व्यक्तियों की शिक्षा के लिए यह सुनिश्चित किया गया है कि प्रत्येक विकलांग बच्चे की सन् 2020 तक स्कूल स्तर के लिए उपयुक्त पहुँच हो। इसके लिए असमर्थ व्यक्तियों की शिक्षा के लिए राष्ट्रीय नीति, 2006 में निम्नलिखित बातों का विशेष ध्यान रखा गया है—

1. प्राइमरी, माध्यमिक तथा उच्चतर शिक्षा स्तर पर विकलांग बच्चों की संख्या तथा शिक्षा जारी करने की वार्षिक समीक्षा करने के लिए अलग व्यवस्था की जायेगी।

2. विकलांग बच्चों की शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए प्रत्येक राज्यसंघ राज्य क्षेत्र में समावेशी शिक्षा के मॉडल स्कूल स्थापित किये जायेंगे।

3. विभिन्न विकलांग बच्चों के लिए पाठ्यक्रम तथा मूल्यांकन पद्धति का विकास किया जायेगा जिनमें उनकी आवश्यकताओं तथा क्षमताओं का ध्यान रखा जायेगा। गणित की पढ़ाई केवल एक भाषा सीखना, आदि जैसी कुछ रियायत देकर परीक्षा पद्धति में सुधार किया जायेगा जिससे कि उसे विकलांगों के अनुकूल बनाया जा सके।

4. अनेक विकलांग बच्चे जो समावेशी शिक्षा में शामिल नहीं हो सकते, को विशेष स्कूलों में शैक्षिक सेवाएँ मिलती रहेंगी। विशेष स्कूल मुख्य धारा की समावेशी शिक्षा में शामिल होने के लिए विकलांग बच्चों को तैयार करने में सहायता करेंगे।

5. मानसिक रूप से अपंग बच्चों के लिए मनोवैज्ञानिक पुनर्वास केन्द्रों में शिक्षा सुविधाएँ प्रदान की जायेंगी।

6. 6 वर्ष की आयु तक के विकलांग बच्चों की पहचान की जायेगी तथा इसके बाद उनका आवश्यक उपचार किया जायेगा ताकि वे समावेशी शिक्षा में भाग ले सकें।

7. सभी स्कूलों को सभी प्रकार के विकलांग बच्चों के लिए बाधा मुक्त बनाया जाएगा ताकि सभी बच्चों की इन स्कूलों तक पहुँच हो।

8. शिक्षण का माध्यम तथा उसकी पद्धति को सामान्य तथा बाधित बच्चों के अनुकूल बनाया जायेगा ताकि सभी बच्चों का शैक्षिक विकास सम्भव हो सके।

9. तकनीकी अनुपूरक तथा विशिष्ट शिक्षा की व्यवस्था एक ही स्कूल में उपलब्ध करवायी जायेगी, जहाँ पर कुछ स्कूल आसानी से जा सकें।

10. स्कूलों में सहायक सामग्री उपलब्ध करवाई जायेगी, स्कूलों में सामान्य पुस्तकालयों, ई-पुस्तकालयों, ब्रेल पुस्तकालयों एवं टाकिंग पुस्तकालयों, स्रोत कक्षों, आदि की स्थापना करने के लिए सुविधाओं का विस्तार करने हेतु प्रोत्साहन दिए जायेंगे।

11. राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयों तथा दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों को लोकप्रिय बनाया जाएगा तथा उनका विस्तार देश के अन्य भागों में किया जाएगा।

12. विकलांग व्यक्तियों द्वारा आपसी बातचीत के लिए सांकेतिक भाषा, वैकल्पिक व अभिवृद्धि सम्बन्धी, सम्प्रेषण माध्यमों को मान्यता प्रदान की जाएगी तथा इनका मानवीकरण किया जाएगा। इन्हें लोकप्रिय भी बनाया जाएगा।

13. विद्यालयों को ऐसी जगह पर स्थापित किया जाएगा जो विकलांग क्षेत्रों की सुविधा के अनुसार हों और जहाँ से यात्रा दूरी कम हो। विकल्प के तौर पर, राज्य, समुदाय एवं गैर-सरकारी संगठनों की सहायता से व्यवहार यात्रा के प्रबन्ध किये जायेंगे।

14. स्कूलों में माता-पिता, अध्यापक परामर्श तथा शिकायत निवारण प्रणाली की स्थापना की जाएगी।

15. कुछ मामलों में विकलांगता, निजी परिस्थितियों और प्राथमिकताओं के स्वरूप के कारण यह आधारित शिक्षा प्रदान की जाएगी।

16. शिक्षा के क्षेत्र में कम्प्यूटर का विशेष महत्त्व है ऐसा प्रयास किया जाएगा कि प्रत्येक विकलांग बच्चे को कम्प्यूटर के प्रयोग का समुचित ज्ञान हो।

17. सामाजिक न्याय और अधिकारिता मन्त्रालय द्वारा वर्तमान में सहायता दिये जा रहे विशेष स्कूल बढ़ती हुई समावेशी शिक्षा के लिए संसाधन केन्द्र बन जायेंगे।

18. विकलांग बच्चों के प्रबन्ध सम्बन्धी मुद्दों पर एक माड्यूल अध्यापकों के प्रवेश तथा सेवाकालीन प्रशिक्षण कार्यक्रमों में शामिल करना।

अभ्यास प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Questions)

1. भारतीय समाज में विभिन्न वर्ग स्तरीय आर्थिक परिस्थितियों में बचपन के स्वरूप को वर्णित कीजिए।

2. बचपन के विकासात्मक चरण को समझाइए।

3. समाजीकरण की अवधारणा व कारक को समझाइए।

4. बच्चों के समाजीकरण में जेण्डर एवं समुदाय की भूमिका समझाइए।

अति लघु उत्तरीय प्रश्न (Very Short Answer Type Questions)

1. समाजीकरण की परिभाषा को समझाइए।

2. बच्चों के समाजीकरण में माता-पिता की क्या भूमिका है ?

3. परिवार के कार्य बताइए।

4. समाजीकरण में लिंग-भेद का क्या प्रभाव पड़ता है ?

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)

1. ''समाजीकरण एक सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है।'' यह कथन किसने कहा है ?

(अ) वाटसन ने (ब) ग्रीन ने

(स) काण्ट ने (द) मोरेल ने। **उत्तर**—(अ)

2. सामाजिक व्यवहार का.....करता है।

(अ) अनुकरण (ब) व्याकरण

(स) निष्ठान (द) कोई नहीं। **उत्तर**—(अ)

इकाई—2
विद्यालय और समाजीकरण
(School and Socialization)

अध्याय—2

शिक्षा, विद्यालय और समाज : अन्तर्सम्बन्धों की समझ

[EDUCATION, SCHOOL AND SOCIETY : UNDERSTANDING OF INTERRELATIONSHIP]

(I) शिक्षा
(EDUCATION)

शिक्षा का शाब्दिक अर्थ एजुकेशन (Education) शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के निम्नलिखित रूपों से मानी जाती है—

(i) **'Educatus'**—यह शब्द 'educare' शब्द का कृदन्त रूप है। 'educare' शब्द 'educere' शब्द से सम्बन्धित है जिसका अर्थ है—निकालना या खींचना (to educe) या विकसित करना। 'Educe' शब्द की उत्पत्ति 'Educere' शब्द से मानी जाती है जिसका अर्थ है—अग्रसर करना या पथ प्रदर्शन (To lead)।

(ii) **'Educatum'**—इस शब्द का अर्थ है—शिक्षण कार्य (Act of teaching)।

(iii) 'Education' शब्द की उत्पत्ति 'E' तथा 'Duco' शब्दों से भी मानी जाती है।

'E' का अर्थ है—अन्दर से बाहर को (out of) तथा 'Duco' का अर्थ है, अग्रसर करना (To lead)।

इस प्रकार 'एजुकेशन' का अर्थ है—बालक में निहित शक्तियों को बाहर निकालकर उनका प्रकटीकरण करना। इस दृष्टि से शिक्षा अन्तर्निहित शक्तियों को मुक्त या खोलने की प्रक्रिया है।

शिक्षा की परिभाषाएँ (Definitions of Education)

अरस्तु के अनुसार, ''स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का सृजन ही शिक्षा है।''

टॉमसन के अनुसार, ''शिक्षा से मेरा तात्पर्य व्यक्ति के ऊपर वातावरण के उस प्रभाव से है जो उसके व्यवहार, विचार एवं अभिवृत्ति की आदतों में स्थायी परिवर्तन उत्पन्न कर देता है।''

महात्मा गाँधी के अनुसार, ''शिक्षा से मेरा तात्पर्य उस प्रक्रिया से है जो बालक व मनुष्य के शरीर, आत्मा के सर्वोत्कृष्ट रूपों में प्रस्फुटित कर दे।

शिक्षा का स्वरूप (Nature of Education)

शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जो मनुष्य की जन्मजात शक्तियों के स्वाभाविक और सामंजस्यपूर्ण विकास में योग देती है। व्यक्ति की वैयक्तिकता का पूर्ण विकास करती है। उसे वातावरण से सामंजस्य स्थापित करने में सहायता देती है। उसे जीवन और नागरिकता के कर्तव्यों और दायित्वों के लिए तैयार करती है तथा उसके व्यवहार, विचार एवं दृष्टिकोण में ऐसा परिवर्तन करती है जो समाज, देश और विश्व के लिए हितकर होता है।

शिक्षा केवल वही नहीं जो बालक को स्कूल में मिलती है, बल्कि शिक्षा का कार्यक्रम जीवनभर चलता रहता है। मनुष्य अपने विभिन्न अनुभवों से अपने जीवनभर कुछ-न-कुछ सीखता है। वह हर किसी परिस्थिति और हर किसी मनुष्य से कुछ-न-कुछ सीखता है।

शिक्षा का अर्थ पहले ज्ञान को बालक के मस्तिष्क में भरने से लगाया जाता था लेकिन अब ऐसा नहीं है। आज शिक्षा का अर्थ बालक की जन्मजात शक्तियों का सर्वांगीण विकास करके उसके जीवन को सफल बनाने से है।

आज की शिक्षा प्रक्रिया में केवल अध्यापक ही सक्रिय नहीं रहता किन्तु बालक सक्रिय होकर अध्यापक के साथ द्विमुखी शिक्षा प्रक्रिया में भाग लेता है।

शिक्षा एक गतिशील प्रक्रिया है। शिक्षा और समाज का साथ-साथ चलना आवश्यक है। जब-जब समाज में परिवर्तन होता है तब-तब शिक्षा में परिवर्तन होना आवश्यक है। समाज को अच्छे-से-अच्छा बनाना शिक्षा का दायित्व है इसलिए शिक्षा को गतिशील प्रक्रिया कहा गया है।

जॉन डीवी ने शिक्षा को एक त्रिमुखी प्रक्रिया माना है। उनका कहना है कि शिक्षा में शिक्षक और शिक्षार्थी के अलावा एक तीसरी चीज है वह है पाठ्यवस्तु। शिक्षा में इन तीनों तत्त्वों की पारस्परिक अन्तः क्रिया निहित है।

एडम्स महोदय ने शिक्षा को द्विध्रुवीय प्रक्रिया माना है जिसमें एक ध्रुव पर सीखने वाला अर्थात् शिक्षार्थी रहता है तथा दूसरे ध्रुव पर सिखाने वाला अर्थात् शिक्षक होता है। वर्तमान समय में शिक्षा जीवन है, यह सम्प्रत्यय प्रो. जॉन डीवी ने स्वीकार कर प्रचारित किया है जिसे भारत तथा अन्य देशों के शिक्षाविदों ने भी माना है। ऐसी दशा में समाज का आधार लेकर शिक्षा दी जाती है। अतः शिक्षा समाज के पुनर्निर्माण की क्रिया है।

सामाजिक शक्तियाँ सामाजिक वातावरण से शिक्षक और शिक्षार्थी को पाठ्यवस्तु प्रदान करती है। जॉन डीवी का कहना है कि बालक उस समाज में रहता है जिस समाज का वह सदस्य है, अतएव शिक्षा का काम है वह व्यक्ति को उसके समाज के लिए तैयार करे। व्यक्ति अपने समाज के लिए तैयार हो सकता है जबकि अपने समाज में होने वाली सभी शिक्षाओं का वह ज्ञान प्राप्त कर ले। समाज की क्रियाओं का वह ज्ञान उस पाठ्यक्रम से होगा जो उस समाज का अंग होगा। इस प्रकार पाठ्यक्रम भी शिक्षा का एक अंग है।

मानव जीवन में शिक्षा के कार्य
(FUNCTIONS OF EDUCATION IN HUMAN LIFE)

मानव जीवन में शिक्षा के कार्य—देश, समाज, समय की आवश्यकताओं के अनुसार सदैव भिन्न रहे हैं और आज भी हैं। वर्तमान समय में समाज के मूल्यों, आवश्यकताओं, उद्देश्यों को ध्यान में रखकर शिक्षा के कार्य का वर्णन कर रहे हैं—

(1) आवश्यकताओं की पूर्ति (Satisfaction of Needs)—भोजन, मकान और वस्त्र मनुष्य की जैविक आवश्यकताएँ हैं। सामाजिक प्राणी के कारण उसे समाज के अन्य व्यक्तियों के साथ सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करने की आवश्यकताएँ हैं।

स्वामी विवेकानन्द ने लिखा है—''शिक्षा का कार्य यह पता लगाना है कि जीवन की समस्याओं को किस प्रकार हल किया जाए और आधुनिक सभ्य समाज का गम्भीर ध्यान इसी में लगा हुआ है।

(2) आत्मनिर्भरता की प्राप्ति (Achievement of Self-Sufficency)—मानव जीवन में शिक्षा का कार्य व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनाना है। अपना कार्य सफलतापूर्वक कर वह जीवन में उन्नति करता है साथ ही वह समाज की उन्नति में भी योगदान देता है।

(3) व्यावसायिक कुशलता की प्राप्ति (Achievement of Vocational Efficiency)—वर्तमान समय में हमारे देश में बड़ी तेजी से औद्योगीकरण हो रहा है। इसलिए वैज्ञानिकों, शिल्पियों और इंजीनियरों की बहुत बड़ी संख्या में आवश्यकता है। यदि शिक्षा छात्रों को किसी व्यवसाय में कुशल बना देगी तो उन्हें रोजगार भी मिलेगा एवं उत्पादन में वृद्धि होगी।

(4) भौतिक सम्पन्नता की प्राप्ति (Achievement of Material Prosperity)—शिक्षा का कार्य व्यक्तियों को भौतिक सम्पन्नता प्राप्त करने में सहायता प्रदान करना है। आजकल सभी माता-पिता चाहते हैं कि उनके बच्चे शिक्षा प्राप्त कर जीवन में उच्च स्थान प्राप्त करें एवं ठाठ-बाट से रहें।

(5) अच्छे नागरिकों का निर्माण (Creation of Good Citizens)—शिक्षा का कार्य उत्तम नागरिकों का निर्माण करना है। हमारा देश धर्म-निरपेक्ष प्रजातन्त्र है। अतः आवश्यक है कि शिक्षा छात्रों में स्पष्ट विचार, अनुशासन, सहनशीलता, सहयोग, देश-प्रेम, आदि गुणों का विकास करे, तभी शिक्षा छात्रों को उत्तम नागरिक बनाकर प्रजातन्त्र को सफल बना सकेगी।

(6) व्यक्तित्व का विकास (Development of Personality)—शिक्षा का कार्य छात्रों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करता है। इस पर सभी शिक्षाविदों ने बल दिया है।

(7) चरित्र का विकास (Development of Character)—शिक्षा व्यक्ति, समाज और संसार की बुराइयों को दूर करके उनमें नैतिकता का समावेश करे। **हरबर्ट** ने लिखा है—''शिक्षा का कार्य उत्तम नैतिक चरित्र का विकास करना है।

(8) अनुभवों का पुनर्गठन (Reorganization of Experiences)—व्यक्ति अपने जीवन में अनेक अनुभव प्राप्त करता है, शिक्षा का कार्य इन अनुभवों का पुनर्गठन एवं पुनर्रचना करना है।

(9) वातावरण से अनुकूलन (Adaptution to Environment)—वातावरण जड़ और चेतन दोनों शिक्षा देने वाले हैं। वातावरण शिक्षक है और शिक्षा का कार्य है छात्रों को उस वातावरण के अनुकूल बनाना, जिससे कि वह जीवित रह सकें और अपनी मूल-प्रवृत्तियों को सन्तुष्ट करने के लिए अधिक-से-अधिक अवसर प्राप्त कर सकें।

(II) विद्यालय
(SCHOOLS)

मनुष्य एक चेतन प्राणी है और वह आजीवन सीखता रहता है। अपने अनुभव में वृद्धि करता रहता है। मनुष्य के भीतर जिज्ञासा का जो स्रोत होता है वह उसे अन्वेषी बनाता है, जिसके कारण हम नये-नये ज्ञान-विज्ञान और तकनीकी से परिचय प्राप्त कर पाते हैं। प्रारम्भ में व्यक्ति अपने परिवार और परिवारीजनों के द्वारा सीखता था, परन्तु कालान्तर में सीखने-सिखाने की प्रक्रिया को क्रमबद्ध और सोद्देश्य बनाने के लिए औपचारिक शिक्षण-संस्थाओं की स्थापना की गयी। विद्यालय का महत्त्व अब परिवार के पश्चात् सर्वोपरि हो गया है और औपचारिक शिक्षण संस्थाओं का महत्त्व अत्यधिक है, उसमें भी विद्यालय सर्वप्रमुख हैं। विद्यालय ही वह स्थल है जहाँ सामूहिकता की भावना सामाजिकता, परोपकार, सहिष्णुता, साथ-साथ कार्य करने की प्रवृत्ति, सहयोग तथा समानता की नींव पड़ती है। लिंगीय अवधारणाएँ अभी भी अपने संकुचित अर्थ में ही पायी जाती है, जिसके कारण बालक-बालिकाओं में असमानता का भेदभाव उनके पालन-पोषण से लेकर जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में किया जाता है। परिणामत: उनकी शिक्षा और विकास की गति अवरुद्ध हो जाती है। विद्यालयों में बिना किसी भेदभाव के बालक-बालिकाएँ समूह में रहकर साथ-साथ कार्य करते हैं, एक ही पाठ्यक्रम तथा पाठ्य-पुस्तकों का अध्ययन कर एक जैसा विकास करते हैं जिससे लिंगीय असमानता में कमी आती है। विद्यालय की चुनौतीपूर्ण लिंग की समानता हेतु भूमिका का प्रस्तुतीकरण प्रस्तुत अध्याय में किया जा रहा है।

विद्यालय का अर्थ तथा परिभाषा (Meaning and Definition of School)

विद्यालय का अर्थ तथा परिभाषा निम्न (1) शाब्दिक अर्थ, (2) परिभाषीय अर्थ, (3) व्यापक अर्थ।

(1) शाब्दिक अर्थ (Verbal Meaning)—विद्यालय दो शब्दों के योग से बना है (विद्या + आलय) = विद्यालय। विद्यालय से तात्पर्य इस प्रकार ऐसे स्थल से है जहाँ पर विद्या प्रदान का जाती हो या ऐसा आलय जहाँ विद्यार्जन होता है।

अंग्रेजी में विद्यालय के लिए स्कूल (School) शब्द प्रयुक्त किया जाता है जिसकी उत्पत्ति ग्रीक शब्द 'Skhola' और 'Skhole' से हुई है। इसका तात्पर्य है 'अवकाश' (Leisure)। विद्यालय का यह अर्थ कुछ विचित्र-सा लगता है, परन्तु वास्तविकता तो यह है कि प्राचीन यूनान में अवकाश के स्थानों को ही विद्यालय के नाम से सम्बोधित किया जाता था। अवकाश को ही 'आत्म-विश्वास' समझा जाता था, जिसका अभ्यास 'अवकाश' नामक निश्चित स्थान पर किया जाता था और धीरे-धीरे यही स्थल सोद्देश्य पूर्ण ज्ञान प्रदान करने के रूप में परिवर्तित हो गये।

ए. एफ. लीच ने 'अवकाश' शब्द का स्पष्टीकरण कुछ इस प्रकार किया है—वाद-विवाद या वार्ता के स्थान जहाँ एथेन्स के युवक अपने अवकाश के समय को खेलकूद, व्यायाम और युद्ध के प्रशिक्षण में बिताते थे, धीरे-धीरे दर्शन तथा उच्च कक्षाओं के विद्यालयों में बदल गये। एकेडमी के सुन्दर उद्योग में व्यतीत किये जाने वाले अवकाश के माध्यम से विद्यालय का विकास हुआ।

(2) परिभाषीय अर्थ (Definition Meaning)—विद्यालय के अर्थ के और अधिक स्पष्टीकरण हेतु कुछ परिभाषाएँ इस प्रकार दृष्टव्य हैं—

(i) जे. के. रॉस—जे. के. रॉस के अनुसार, विद्यालय वे संस्थाएँ हैं जिनको सभ्य मानव ने इस दृष्टि से स्थापित किया है कि समाज में सुव्यवस्थित तथा योग्य सदस्यता के लिए बालकों की तैयारी में सहायता मिले।

(ii) जॉन डीवी के अनुसार, विद्यालय एक ऐसा विशिष्ट वातावरण है जहाँ बालक के वांछित विकास की दृष्टि से उसे विशिष्ट क्रियाओं तथा व्यवसायों की शिक्षा दी जाती है।

(iii) टी. पी. नन के अनुसार, विद्यालय को मुख्य रूप से इस प्रकार का स्थान नहीं समझा जाना चाहिए जहाँ किसी निश्चित ज्ञान को सीखा जाता है वरन् ऐसा स्थान जहाँ बालकों को क्रियाओं के उन निश्चित रूपों में प्रशिक्षित किया जाता है जो इस विज्ञान संसार में सबसे महान् और सबसे अधिक महत्त्व वाली है।

(iv) के. जी. सैयदेन के अनुसार, एक राष्ट्र के विद्यालय जनता की आवश्यकताओं तथा समस्याओं पर आधारित होने चाहिए। विद्यालय का पाठ्यक्रम उनके जीवन के साररूप होना चाहिए। इसको सामुदायिक जीवन की महत्त्वपूर्ण विशेषताओं को अपने स्वाभाविक वातावरण में प्रतिबिम्बित करना चाहिए।

(3) व्यापक अर्थ (Wide Meaning)—सामान्य रूप से विद्यालयों को सूचना विक्रेताओं के रूप में माना जाता है। इस अवधारणा का स्पष्टीकरण **पेस्टालॉजी** ने इस प्रकार किया है—''ये विद्यालय अमनोवैज्ञानिक हैं जो बालक को उसके स्वाभाविक जीवन से दूर कर देते हैं, उनकी स्वतन्त्रता को निरंकुशता से रोक देते हैं और उसे अनाकर्षक बातों को याद रखने के लिए भेड़ों के समान हाँकते हैं और घण्टों, दिनों, सप्ताहों, महीनों तथा वर्ष तक दर्दनाक जंजीरों से बाँध देते हैं।''

अपने व्यापक अर्थ में विद्यालय समाज का लघु रूप है, सद्भावना, प्रेम तथा विश्व-शान्ति का केन्द्र है।

विद्यालय का महत्त्व, आवश्यकता तथा कार्य (Importance, Needs and Functions of Schools)

मनुष्य का जीवन धीरे-धीरे जटिल होता जा रहा है और उसकी आवश्यकताएँ भी असीमित हैं जिनकी पूर्ति के लिए व्यक्ति और बढ़ती जनसंख्या के मध्य अपने अस्तित्व और आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए दिन-रात परिश्रम कर रहा है। परिणामस्वरूप माता-पिता और अभिभवाक कार्य में संलग्न होने के कारण अपने बच्चों को समय नहीं दे पाते हैं जिससे विद्यालय की आवश्यकता और महत्त्व में वृद्धि हुई है। पहले विद्यालयीय शिक्षा कुछ विशिष्ट व्यक्तियों तथा उच्च और कुलीन वर्गों तक ही सीमित थी, परन्तु जनतान्त्रिक दृष्टिकोण के कारण अनिवार्य और सार्वभौमिक शिक्षा होने से सभी वर्गों और लिंगों की शिक्षा अनिवार्य हो गयी है। विद्यालय की आवश्यकता तथा महत्त्व निम्नानुसार हैं—

- विशाल सांस्कृतिक संरक्षण एवं हस्तान्तरण हेतु।
- सोद्देश्यपूर्ण शिक्षण हेतु।
- विशिष्ट शिक्षा प्रदान हेतु।
- परिवार तथा विश्व को जोड़ने वाली कड़ी।
- सहयोग, प्रेम, सहानुभूति और भ्रातृत्व के विकास हेतु।
- वास्तविक जीवन की परिस्थितियों की तैयारी हेतु।
- लोकतान्त्रिक प्रणाली की रक्षा और सुदृढ़ता हेतु।
- समाज की निरन्तरता और विकास हेतु।
- व्यक्तित्व तथा सर्वांगीण विकास हेतु।
- अर्थोपार्जन हेतु।
- आदर्श नागरिकता के निर्माण हेतु।
- मनुष्यता तथा मानवता के विकास हेतु।

- देश की उन्नति तथा प्रगति हेतु।
- व्यापक दृष्टिकोण के विकास हेतु।
- जाति-पाँति, ऊँच-नीच तथा अमीर-गरीब के मध्य विद्यमान खाई पाटने हेतु।
- लिंगीय भेदभावों को समाप्त करने, आपस में अन्त:क्रिया और सहयोग स्थापित करने हेतु।

विद्यालय में प्रदान किया जाने वाला ज्ञान ही व्यक्ति का जीवन की कठिन-से-कठिन परिस्थितियों में मार्गदर्शन करता है। इसी कारण अज्ञानी मनुष्य को पूँछ के बिना ही पशु कहा गया है।

टी. पी. नन ने विद्यालय के महत्त्व तथा आवश्यकता को किसी भी राष्ट्र और समाज के लिए महत्त्वपूर्ण मानते हुए अपने विचार इन शब्दों में व्यक्त किये हैं—''एक राष्ट्र के विद्यालय उसके जीवन के अंग हैं, जिनका विशेष कार्य है—उसकी आध्यात्मिक शक्ति दृढ़ बनाना, उसकी ऐतिहासिक निरन्तरता को बनाए रखना, उसकी भूतकाल की सफलताओं को सुरक्षित रखना और उसके भविष्य की गारण्टी करना।

विद्यालय के कार्य (Functions of Schools)—विद्यालय के कार्यों का वर्णन दो प्रकार से किया जा सकता है—

1. औपचारिक कार्य,
2. अनौपचारिक कार्य।

औपचारिक कार्य (Informal Functions)—औपचारिक कार्य निम्नानुसार हैं—

- चरित्र निर्माण
- मानसिक शक्तियों का विकास
- गतिशील तथा सन्तुलित मस्तिष्क का निर्नाण
- नेतृत्व क्षमता का विकास
- सांस्कृतिक सुधार, सुरक्षा और हस्तान्तरण
- व्यावसायिक तथा औद्योगिक शिक्षा
- नागरिकता का विकास
- मानवीय अनुभवों का पुनर्गठन तथा पुनर्रचना
- नैतिकता तथा आध्यात्मिकता का विकास।

औपचारिक कार्य (Formal Functions)—औपचारिक कार्य निम्नानुसार हैं—

- शारीरिक विकास
- सामाजिकता की भावना का विकास
- भावनात्मक विकास
- रचनात्मक विकास।

टॉमसन ने विद्यालयों के कार्य निम्न प्रकार बताये हैं—

- मानसिक प्रशिक्षण का कार्य
- चारित्रिक प्रशिक्षण का कार्य
- सामुदायिक जीवन के प्रशिक्षण का कार्य
- राष्ट्रीय गौरव तथा देश-प्रेम का प्रशिक्षण
- स्वास्थ्य एवं स्वच्छता का प्रशिक्षण।

बूबेकर के अनुसार विद्यालयों के कार्य निम्नवत् हैं—

- संरक्षण कार्य
- प्रगतिशील कार्य
- निष्पक्ष कार्य अथवा अभेदात्मक व्यवहार की शिक्षा का कार्य।

समाज में विद्यालय का स्थान, महत्त्व व आवश्यकता
(PLACE, IMPORTANCE AND NEEDS OF SCHOOL IN SOCIETY)

समाज में विद्यालय के स्थान, महत्त्व और आवश्यकताएँ निम्न हैं—

1. जीवन की जटिलता (Complexity of life)—आज का जीवन प्राचीन काल के जीवन के समान सरल और सुखमय नहीं है। उस समय मनुष्य के पास अपनी सब आवश्यकताओं को स्वयं पूर्ण करने और अपने बच्चों की शिक्षा की स्वयं देखभाल करने के लिए समय था। आज जनसंख्या की वृद्धि, आवश्यकताओं की अधिकता और वस्तुओं के बढ़ते हुए मूल्य के कारण जीवन बहुत कठिन हो गया है। मनुष्य को अपने कार्यों से इतनी फुरसत नहीं मिलती है कि वह अपने बच्चों की शिक्षा की देखभाल कर सके इसलिए उसने यह कार्य विद्यालय को सौंप दिया है।

2. विशाल सांस्कृतिक विरासत (Wide Cultural Inheritance)—आज की सांस्कृतिक विरासत बहुत विशाल हो गयी है। इसमें अनेक प्रकार के ज्ञान, कुशलताओं और कार्य करने की विधियों का समावेश हो गया है। ऐसी विरासत की शिक्षा देने में व्यक्ति अपने को असमर्थ पाते हैं। अत: उन्होंने यह कार्य विद्यालय को सौंप दिया है।

3. विशिष्ट वातावरण की अवस्था (Situation of Specific Environment)—विद्यालय छात्रों को एक विशिष्ट वातावरण प्रदान करता है। यह वातावरण शुद्ध, सरल और सुव्यवस्थित होता है। इसमें छात्रों की प्रगति पर स्वस्थ और शिक्षाप्रद प्रभाव पड़ता है। ऐसा वातावरण शिक्षा को और कोई स्थान नहीं प्रदान कर सकता है।

4. घर व विश्व को जोड़ने वाली कड़ी (Chains denoting Agent of Home and World)—बालक की शिक्षा में घर का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। घर में रहकर वह अनुशासन, सेवा, सहानुभूति, निस्वार्थता, आदि गुणों को सीखता है पर घर की चारदीवारी में बँधे रहने के कारण उनके ये गुण अपने परिवार के व्यक्तियों तक ही सीमित रहते हैं फलत: उसका दृष्टिकोण संकुचित होता है। विद्यालय में विभिन्न वर्गों और सम्प्रदायों के बालकों के सम्पर्क में आकर उसका दृष्टिकोण विस्तृत होता है साथ ही बाह्य समाज से उसका सम्पर्क स्थापित हो जाता है। इस प्रकार विद्यालय घर और बाह्य जीवन को जोड़ने वाली कड़ी है।

रेमाण्ट का कथन है—''विद्यालय बाह्य जीवन के बीच की अर्द्ध-पारिवारिक कड़ी है जो बालक की उस समय प्रतीक्षा करता है, जब वह अपने माता-पिता की छत्रछाया को छोड़ता है।

व्यक्तित्व का सामंजस्यपूर्ण विकास (Full Co-ordination Development of Personality)—घर, समाज, धर्म, आदि शिक्षा के अच्छे साधन हैं पर इनका न तो कोई निश्चित उद्देश्य होता है और न पूर्व-नियोजित कार्यक्रम। फलत: कभी-कभी बालक के व्यक्तित्व पर इसका बुरा प्रभाव पड़ता है। इसके विपरीत विद्यालय का एक निश्चित उद्देश्य और पूर्व-नियोजित कार्यक्रम होता है परिणामस्वरूप इसका बालक पर व्यवस्थित रूप से प्रभाव पड़ता है और उसके व्यक्तित्व का सामजंस्यपूर्ण विकास होता है।

बहुमुखी सांस्कृतिक चेतना का विकास (Development of Multipurpose Cultural Consciousness)—विद्यालय में विभिन्न परिवारों, समुदायों और संस्कृतियों से छात्र आते हैं। परस्पर सम्पर्क के कारण उनमें एक-दूसरे के सांस्कृतिक गुण आ जाते हैं। अत: विद्यालयों को छात्रों में बहुमुखी सांस्कृतिक चेतना का विकास करने का महत्त्वपूर्ण साधन समझा जाता है।

आदर्शों व विचारधाराओं का प्रसार—राज्य के आदर्शों और विचारधाराओं को फैलाने के लिए विद्यालय को अति महत्त्वपूर्ण साधन माना गया है इसलिए सभी प्रकार के राज्यों—लोकतन्त्रीय, फासिस्टवादी, साम्यवादी, आदि से विद्यालयों का स्थान गौरवपूर्ण है।

समाज की निरन्तरता व विकास (Development and Continuity of Society)—विद्यालय एक प्रमुख सामाजिक संस्था है। शिक्षा की प्रक्रिया सामाजिक होने के कारण विद्यालय सामुदायिक जीवन का वह स्वरूप है जिसमें समाज की निरन्तरता और विकास के लिए सभी प्रभावपूर्ण साधन केन्द्रित होते हैं। विद्यालय के इसी महत्त्व के कारण **टी. पी. नन** ने लिखा है—''विद्यालय को समस्त संसार का नहीं, वरन् समस्त मानव समाज का आदर्श लघु रूप होना चाहिए।''

विद्यालय : घर से शिक्षा का उत्तम स्थान (Schools : Good Place of Education than Home)—विद्यालय घर की अपेक्षा शिक्षा का उत्तम स्थान है। कारण यह है कि विद्यालय में विभिन्न आदतों, रुचियों और दृष्टिकोणों के बालक आते हैं। अत: परस्पर सम्पर्क के कारण बालक उन बातों को सीखते हैं जिन्हें वे घर की चारदीवारी के अन्दर नहीं सीख सकते हैं। यदि बालकों को संसार के ढंगों से परिचित करना है, यदि उनको सामाजिक शिष्टाचार और सहानुभूति सिखानी है, यदि उनको निष्पक्षता और सहयोग के महत्त्व को बताना है तो उनको घर से बाहर विद्यालय में भेजना अनिवार्य है।

शिक्षित नागरिकों का निर्माण (Creation of Educated Citizens)—विद्यालय ही एकमात्र वह साधन है जिसके द्वारा शिक्षित नागरिकों का निर्माण किया जा सकता है। यदि एक देश के समस्त बालकों को एक निश्चित आयु तक नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा दी जाती है तो वे स्थायी रूप से साक्षर हो जाते हैं। साक्षर होने के साथ-साथ उनमें धैर्य, सहयोग, उत्तरदायित्व, आदि गुणों का विकास होता है। इस प्रकार बड़े होकर बालक राज्य के उपयोगी नागरिक सिद्ध होते हैं।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर विद्यालय के स्थान, महत्त्व और आवश्यकता को सफलतापूर्वक समझा जा सकता है। वास्तव में व्यक्ति और समाज—दोनों की प्रगति के लिए विद्यालय अति आवश्यक हैं इसलिए किसी भी सामाजिक ढाँचे में इनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती है। **टी. पी. नन** ने सत्य लिखा है—''एक राष्ट्र के विद्यालय उसके जीवन के अंग हैं, जिनका विशेष कार्य है—उसकी आध्यात्मिक शक्ति को दृढ़ बनाना, उसकी ऐतिहासिक निरन्तरता को बनाए रखना, उसकी भूतकाल की सफलताओं को सुरक्षित रखना और उसके भविष्य की गारण्टी करना।''

(III) समाज
(SOCIETY)

मनोविज्ञान के अनुसार कोई बालक जब जन्म लेता है तो वह न सामाजिक प्राणी होता है और न ही असामाजिक, परन्तु उस समय भी समाज ही उसकी समस्त आवश्यकताओं तथा उत्तरदायित्वों की पूर्ति का कार्य सम्पन्न करता है। समाज के इतर मनुष्य के जीवन की परिकल्पना भी नहीं की जा सकती है। समाज में प्रत्येक बालक की आवश्यकताओं, रुचियों इत्यादि पर ध्यान दिया जाता है। बालक को सर्वप्रथम सामाजिकता का पाठ पढ़ाया जाता है जिससे वे सामाजिक अनुकूलन कर सकें। सामाजिक ताने-बाने की जटिलता को समझना बालक के लिए प्रारम्भ में दुष्कर होता है, परन्तु धीरे-धीरे वह अनुकरण और पर्यवेक्षण के व्यापक सामाजिकता का पाठ सीखकर समाज का सक्रिय सदस्य बन जाता है। समाज में अलग-अलग प्रकार के लोग निवास करते हैं जिनकी अपनी मान्यताएँ तथा परम्पराएँ और विशिष्ट विश्वास तथा संस्कृतियाँ होती हैं जिनके अनुरूप ही समाज में समाजीकरण की प्रक्रिया सम्पन्न होती है। लिंगीय आधार पर हमारे समाज में सामाजिकता के मानक तथा आदर्श भिन्न-भिन्न हैं और इस प्रक्रिया में परिवार, जाति, धर्म, प्रचलित संस्कृति तथा संस्कृति, जनसंचार, कानून तथा राज्य की भूमिका महत्त्वपूर्ण है।

समाज तथा समाजीकरण में लिंग की भूमिका परिवार के सन्दर्भ में (Role of Gender in Society and Socialization in Context of Family)

समाज तथा समाजीकरण में लिंग की भूमिका परिवार के सन्दर्भ में अर्थात् परिवार की लिंगीय अवधारणा का प्रभाव किस प्रकार बालकों के समाजीकरण तथा समाज पर पड़ता है। इस विवेचन से पूर्व समाज, समाजीकरण, परिवार तथा लिंग के विषय में परिचय प्राप्त करना आवश्यक हो जाता है।

समाज तथा समाजीकरण का अर्थ एवं परिभाषाएँ (Meaning and Definitions of Society and Socialization)

समाज के लिए अंग्रेजी में 'Society' (सोसायटी) शब्द का प्रयोग किया जाता है। सामान्यत: समाज से तात्पर्य मवुष्यों के समूहों के मध्य स्थापित सम्बन्धों के संगठित रूप से है।

अधिक स्पष्टीकरण हेतु कुछ परिभाषाएँ दृष्टव्य हैं—

मैकाइवर तथा **पेज** के अनुसार, ''समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल है, जो सदैव बदलता रहता है।''

टॉलकाट पारसन्स के अनुसार, ''समाज मानवीय सम्बन्धों का पूर्ण ढाँचा है जो वास्तविक या प्रतीकात्मक साधनों या सम्बन्धों के द्वारा कार्यरत रहता है।

गिडिंग्स के अनुसार, ''समाज स्वयं संघ है, संगठन है, औपचारिक सम्बन्धों का योग है जिसमें सहयोग देने वाले व्यक्ति एक-दूसरे के साथ रहते हुए या सम्बद्ध हैं।''

लैपियर के अनुसार, ''समाज का सम्बन्ध केवल लोगों के समूह के साथ नहीं, बल्कि उनके बीच होने वाले अन्तकार्यों के जटिल ढाँचे के साथ है।

र्‌यूटर के अनुसार, ''यह एक अमूर्त धारणा है जो एक समूह के सदस्यों के बाद पाए जाने वाले पारस्परिक सम्बन्धों की जटिलता का बोध कराती है।

राइट के अनुसार, ''समाज का अर्थ केवल व्यक्तियों का समूह ही नहीं है, समूह में रहने वाले व्यक्तियों के जो पारस्परिक सम्बन्ध हैं, उन सम्बन्धों के संगठित रूप को समाज कहते हैं।''

इस प्रकार समाज का अर्थ इन शब्दों में व्यक्त किया जा सकता है कि ''समाज समूह में रहने वाले व्यक्तियों के मध्य सम्बन्धों तथा जटिल अन्तर्क्रियाओं की अमूर्त धारणा है, जो परस्पर किसी-न-किसी प्रकार सम्बद्ध हैं।

समाज की विशेषताएँ या तत्त्व (Characteristics or Elements of Society)

समाज की परिभाषाओं तथा अर्थ के स्पष्टीकरण के पश्चात् हमें निम्नांकित विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती हैं—

- समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल है।
- समाज में व्यक्ति परस्पर जुड़े रहते हैं।
- समाज सम्बन्धों का संगठित रूप है।
- समाज स्वयं एक प्रकार का संगठन है।
- व्यक्तियों के मध्य होने वाली अन्तर्क्रिया को समाज द्योतित करता है।

तत्त्व—समाज के लिए आवश्यक तत्व निम्न हैं—

- व्यक्तियों का समूह।
- परस्पर सम्बन्ध।
- अन्त:र्क्रिया।
- संगठित रूप।

समाज के प्रकार (Types of Society)—समाज की संरचना सब कहीं एक जैसी नहीं होती है। इनके विभाजन के कई आधार हैं, जिनके आधार पर इसके प्रकार निम्न हैं—

कार्य एवं स्वरूप के आधार पर (On the Basis of Functions and Forms)—

- जनजातीय समाज
- कृषक समाज
- औद्योगिक समाज
- शिल्पी समाज।

समाज के प्रकार (Types of Society)—

- परम्परागत समाज
- बन्द समाज
- मुक्त समाज
- आदिम समाज
- सभ्य समाज
- सरल समाज
- जटिल समाज
- वर्तमान समाज।

मार्क्स के अनुसार (According to Marx)—

- आदिम समाज
- एशियाई समाज
- प्राचीन समाज
- सामन्तवादी समाज
- पूँजीवादी समाज
- समाजवादी समाज।

समाज के कार्य (Functions of Society)

समाज के कई प्रकार के कार्य हैं और इन्हीं कार्यों के आधार पर समाज की उपयोगिता तथा महत्त्व एक शिशु से लेकर वृद्ध तक के लिए है। विभिन्न समाजों के कार्यों कुछ विशिष्टताएँ तथा उनकी मान्यता के अनुरूप कुछ विशेष कार्य होते हैं। समाज के कार्यों का वर्णन निम्नानुसार है—

- व्यक्ति का सर्वांगीण विकास
- सामाजिक कार्य
- आर्थिक कार्य
- नैतिक कार्य
- आवश्यकताओं की पूर्ति का कार्य
- सामाजिक नियन्त्रण का कार्य।
- सुरक्षात्मक एवं पोषण-विषयी कार्य
- सांस्कृतिक कार्य
- राजनैतिक कार्य
- समाजीकरण कार्य
- आदर्श व्यक्तियों के निर्माण का कार्य

व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास (All-round Development of Personality)—समाज बालक के व्यक्तित्व के विकास के तमाम अवसर सामाजिक क्रिया-कलापों के द्वारा प्रदान करता है। व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास से तात्पर्य बालक का शारीरिक, मानसिक, इत्यादि शक्तियों के विकास से है।

सुरक्षात्मक एवं पोषण-विषयी कार्य (Defensive and Nutrients related Functions)—समाज में बालक को गर्भावस्था से लेकर मृत्यु तक सुरक्षा प्रदान की जाती है तथा पोषण और स्वास्थ्य का कार्य समाज में रहकर ही सम्पन्न होता है।

सामाजिक कार्य (Social Functions)—सामाजिकता का असली पाठ बालक समाज में ही सीखता है। प्रत्येक समाज के कुछ सामाजिक नियम, रीति-रिवाज तथा मान्यताएँ हैं जिनको मानना प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है और ऐसा न करने वालों को समाज द्वारा दण्डित भी किया जाता है।

सांस्कृतिक कार्य (Cultural Functions)—समाज के द्वारा सांस्कृतिक सुरक्षा, विकास और भावी पीढ़ियों को अपनी विशिष्ट संस्कृतियों का हस्तान्तरण करने का कार्य किया जाता है।

आर्थिक कार्य (Economic Functions)—समाज अपने नागरिकों के आर्थिक विकास के कार्य हेतु नियमों, आर्थिक संगठनों तथा आर्थिक क्रियाकलापों का संचालन करता है। इस प्रकार समाज के आर्थिक कार्य अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हैं।

राजनैतिक कार्य (Political Functions)—समाज के राजनैतिक कार्य भी होते हैं। समाज अपने नागरिकों को राजनैतिक अधिकारों का प्रयोग करने तथा सक्रिय सहभागिता हेतु जागरूक करने का कार्य करता है।

नैतिक कार्य (Moral Functions)—समाज अपने नागरिकों में नैतिकता के विकास कार्य उन्नत आदर्शों, नैतिक वातावरण के सृजन तथा नैतिकता के प्रोत्साहन द्वारा सम्पन्न करता है।

समाजीकरण का कार्य (Functions of Socialization)—समाज में ही बालक समाजीकरण सीखता है। समाजीकरण के द्वारा ही कोई व्यक्ति समाज का सक्रिय तथा उपयोगी सदस्य बन सकता है।

आवश्यकताओं की पूर्ति का कार्य (Functions of Supply of Needs)—प्रत्येक व्यक्ति की कुछ मौलिक तथा भौतिक आवश्यकताएँ होती हैं जिनकी पूर्ति वह समाज में रहकर ही करता है। इस प्रकार समाज मनुष्य की प्रत्येक प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति का कार्य करने के कारण महत्त्वपूर्ण है।

आदर्श व्यक्तियों के निर्माण का कार्य (Functions of Creation of Ideal Personalities)—समाज आदर्श व्यक्तियों के निर्माण का कार्य सम्पन्न करता है जो किसी भी समाज और देश की उन्नति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आदर्श व्यक्तियों के अन्तर्गत समाज ईमानदार, कर्तव्यनिष्ठ, धर्मनिरपेक्ष, जाति-पाँति, ऊँच-नीच की संकीर्ण विचारधारा से मुक्त बालक-बालिकाओं के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण रखने वाले आते हैं।

सामाजिक नियन्त्रण का कार्य (Functions of Societal Control)—समाज अपने व्यक्तियों को नियन्त्रण करने का कार्य करता है। यदि समाज नहीं होता तो लोग अनियमित तथा स्वच्छन्द हो जाते, परन्तु उन्हें अपने तमाम प्रकार के नियमों द्वारा नियन्त्रित करता है।

समाज की आवश्यकता तथा महत्त्व (Needs and Importance of Society)

समाज की आवश्यकता तथा इसके महत्त्व का आकलन निम्नांकित बिन्दुओं के अन्तर्गत किया जा सकता है—

- समाज में रहना मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति है अत: वह प्रत्येक मनुष्य हेतु आवश्यक और महत्त्वपूर्ण है।
- समाज व्यक्ति को मनोवैज्ञानिक सुरक्षा प्रदान करता है।
- समाज में रहकर व्यक्ति अपनी समस्त आवश्यकताओं और इच्छाओं की पूर्ति कर सकता है।
- समाज में रहकर ही व्यक्ति सभ्य बन सकता है।
- समाज में रहकर व्यक्ति अधिक-से-अधिक अधिगम कर उसका प्रयोग अपने व्यावहारिक जीवन में कर सकता है।
- आर्थिक स्वावलम्बन हेतु समाज उपयोगी है।
- सामाजिक सुरक्षा तथा सांस्कृतिक विकास के लिए समाज महत्त्वपूर्ण है।
- मनुष्य के समग्र विकास हेतु समाज महत्त्वपूर्ण है।
- मनुष्य को समाज में रहकर ही अभिव्यक्ति तथा आत्म-प्रकाशन के अवसर मिलते हैं। इस दृष्टि से भी समाज महत्त्वपूर्ण है।
- शिक्षा की प्राप्ति तथा जीवन के उच्चतम आदर्शों की प्राप्ति समाज में रहकर ही सम्भव है।
- समाज में रहकर व्यक्ति परस्पर सहयोग, प्रेम, दया, समानता इत्यादि के व्यवहारों को करना सीखते हैं।
- समाज तथा सामाजिक ताने-बाने का ही परिणाम है कि बच्चों, वृद्धों, असहायों, नि:शक्तों तथा गरीबों को भी सहायता प्राप्त होती है।
- समाज अपने नागरिकों को आवश्यक स्वतन्त्रता के साथ-साथ अपना नियन्त्रण भी स्थापित करता है जो महत्त्वपूर्ण है।

इस प्रकार के बिना मनुष्य जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती इसलिए समाज के महत्त्व को सभी ने स्वीकार किया है। समाज के महत्त्व और उपादेयता को दृष्टिगत रखते हुए ही मनुष्य को सामाजिक प्राणी की संज्ञा प्रदान की गयी है। समाज के नियमों, परम्पराओं, संस्कृतियों तथा क्रियाकलापों के साथ अनुकूलन करके कदम-से-कदम मिलाकर चलने की प्रक्रिया को समाजीकरण कहा जाता है। समाजीकरण का महत्त्व भी बालक के जीवन में उसी प्रकार है जिस प्रकार समाज का है, क्योंकि समाजीकरण के द्वारा ही वह समाज का अभिन्न अंग और सक्रिय सदस्य बनता है।

विद्यालय में समाजीकरण प्रक्रिया : विभिन्न कारकों की भूमिका व प्रभावों की समझ

(SOCIALIZATION PROCESS IN SCHOOLS : ROLE OF DIFFERENT FACTORS AND UNDERSTANDING OF EFFECTS)

विद्यालय (Schools)

परिवार के बाद विद्यालय आता है, जहाँ बच्चे का समाजीकरण होता है। विद्यालय ही उसे मानसिक, सामाजिक और संवेगात्मक विकास के लिए प्रेरणा देता है। विद्यालय में ही उसे सामाजिक और सांस्कृतिक आदर्शों और मान्यताओं की शिक्षा प्राप्त होती है। बच्चा समझने लगता है कि परिवार की अपेक्षा विद्यालय कहीं अधिक विस्तृत समाज है। अन्य बच्चों के सम्पर्क में आने से उनका समाजीकरण तीव्र गति से होने लगता है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात जो बच्चा विद्यालय में सीखता है, वह है 'प्रतियोगिता'। कक्षा में, खेल के मैदान में, परीक्षा में—सभी जगह प्रतियोगिता होती है। बच्चा इस प्रतियोगिता में आगे निकलना चाहता है, भले ही वह दूसरों को हानि पहुँचाकर ऐसा करे। इसका प्रभाव उसके आगामी जीवन पर अच्छा नहीं पड़ता है।

विद्यालय के बच्चे को कुछ नियमों का पालन करना पड़ता है। यदि नियम आवश्यकता से अधिक कठोर हैं, तो उनका बच्चे के समाजीकरण पर अच्छा प्रभाव नहीं पड़ता है। यदि विद्यालय का अनुशासन अच्छा नहीं है, तो बच्चा अपने व्यवहार पर नियन्त्रण करना नहीं सीख पाता है। बच्चे के समाजीकरण को निर्देशित करने वाली विद्यालय की अन्य बातें हैं—परीक्षाफल, खेलों में प्रसिद्धि, आर्थिक और सामाजिक स्तर, छात्रों की संख्या, शिक्षक और उनकी योग्यता, आदि।

समुदाय बालक के सामाजिक विकास पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव डालता है। बालक बड़े-बूढ़ों के सम्पर्क में आकर विभिन्न अनुभवों को सीखता है। साथ ही उनका अनुकरण करके विभिन्न प्रकार के सामाजिक व्यवहारों को सीखता है। साथ ही समुदाय के लोग उनके सामाजिक विकास के लिए विभिन्न शैक्षिक संस्थाओं, सामाजिक क्रिया-कलापों, आदि का आयोजन करते हैं।

बालक के सामाजिक विकास में जाति तथा वर्ग का भी महत्त्वपूर्ण योग रहता है। जाति जन्म के आधार पर सामाजिक संस्तरण तथा खण्ड विभाजन की वह गतिशील व्यवस्था है जो खाने-पीने, विवाह, पेशा, सामाजिक सहवासों, आदि के सम्बन्ध में अनेक या कुछ प्रतिबन्धों को अपने सदस्यों पर लागू करती है। इस प्रकार जाति बालक के सामने कुछ निर्देश, नियम, प्रतिबन्ध, आदि प्रस्तुत करके उसके सामाजिक व्यवहार को अपने अनुकूल बनाती है। साथ ही उसको नियन्त्रित भी करती है। वर्ग-व्यवस्था बालक में वर्ग-चेतना विकसित करती है। साथ ही उसके सामाजिक सम्बन्धों के क्षेत्र को निश्चित बनाती है। ये सामाजिक सम्बन्ध उसके सामाजिक क्रिया-कलापों एवं सामाजिक व्यवहारों को निर्धारित करते हैं।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि समूह बालक के व्यक्तित्व को जन्म देते हैं। ये उसके सामान्य सामाजिक लक्षणों का निर्माण करते हैं। संस्कृति का प्रभाव भिन्न-भिन्न संस्कृतियों में भिन्न-भिन्न होता है। संस्कृति बालक के व्यक्तित्व में विशेषता उत्पन्न करती है। संस्कृति एक कलाकार के समान बालक के व्यक्तित्व को अपनी कल्पनाओं के अनुसार चित्रित करती है। समूह सामाजिक लक्षणों का निर्माण करते हैं तो संस्कृति इन लक्षणों को एक निश्चित रूप देती है। प्रत्येक संस्कृति में निश्चित मार्ग होते हैं और उस संस्कृति में रहने वाले मनुष्यों को उन मार्गों का अनुकरण करना होता है। इस प्रकार समूह व संस्कृति बालक के सामाजिक विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

समाजीकरण की प्रक्रिया में शिक्षक का कार्य
(FUNCTIONS OF TEACHER IN PROCESS OF SOCIALIZATION)

बालक के समाजीकरण की प्रक्रिया में परिवार के बाद विद्यालय और विद्यालय में विशेष रूप से शिक्षक आता है। प्रत्येक समाज के कुछ विश्वास, दृष्टिकोण, मान्यताएँ, कुशलताएँ और परम्पराएँ होती हैं, जिनको 'संस्कृति' के नाम से पुकारा जाता है। यह संस्कृति एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित की जाती है और समाज के लोगों के आचरण को प्रभावित करती है। शिक्षक का सर्वश्रेष्ठ कार्य है—इस संस्कृति को बालक को प्रदान करना। यदि वह यह कार्य नहीं करता है, तो बालक का समाजीकरण नहीं कर सकता है।

शिक्षक, माता-पिता के साथ बालक के चरित्र और व्यक्तित्व का विकास करने में अति महत्त्वपूर्ण कार्य करता है। फिर भी, शिक्षक और माता-पिता एक-दूसरे से दूर रहते हैं और सम्पर्क में नहीं आते। परिणाम यह होता है कि शिक्षक, बालक की रुचियों, मनोवृत्तियों, आदि को नहीं समझ पाता है। इसलिए वह बालक का समाजीकरण उचित दिशा में करने में असफल होता है। इस प्रकार से यह अति आवश्यक है कि शिक्षक और माता-पिता एक-दूसरे के घनिष्ठ सम्पर्क में रहें और एक ही प्रकार के विश्वासों और दृष्टिकोणों को अपनाकर बालक का उचित दिशा में समाजीकरण करें।

कक्षा और खेल के मैदान में, साहित्यिक और सांस्कृतिक क्रियाओं में शिक्षक सामाजिक व्यवहार के आदर्श प्रस्तुत करता है। बालक अपनी अनुकरण की मूल प्रवृत्ति के कारण शिक्षक के ढंगों, कार्यों, आदतों और रीतियों का अनुसरण करता है। अत: शिक्षक को सदैव सतर्क रहना चाहिए। उसे कोई ऐसा अनुचित कार्य या व्यवहार नहीं करना चाहिए, जिसका बालक के ऊपर गलत प्रभाव पड़े। जो प्रभाव वह बालक पर डालता है, वह बहुत समय तक बना रहता है। अत: उसे अपने कथनों और कार्यों से केवल उन बातों का सुझाव देना चाहिए, जिन पर समाज की स्वीकृति की छाप लगी है।

सारांश में, हम कह सकते हैं कि शिक्षक—बालक के समाजीकरण को प्रभावित करता है। शिक्षक के स्नेह, पक्षपात, बुरे व्यवहार, दण्ड, आदि का सभी बच्चों पर कुछ-न-कुछ प्रभाव पड़ता है और उसका सामाजिक विकास उत्तम या विकृत हो जाता है। **हार्ट** (F. W. Hart) ने इस सम्बन्ध में परीक्षण किये हैं। यदि शिक्षक, मित्रता और सहयोग में विश्वास करता है तो बच्चों में भी इन गुणों का विकास होता है। यदि शिक्षक तनिक-तनिक सी बातों पर बच्चों को दण्ड देता है, तो उनके समाजीकरण में संकीर्णता आ जाती है। यदि शिक्षक अपने छात्रों के प्रति सहानुभूति रखता है, तो छात्रों का समाजीकरण सामान्य रूप से होता है।

शिक्षा, शिक्षण, विद्यालय : सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक व राजनीतिक आधार

(EDUCATION, TEACHING, SCHOOLS : SOCIAL, CULTURAL, ECONOMICAL AND POLITICAL BASES)

शिक्षा के सामाजिक आधार (Social Bases of Education)

कार्ल मैनहीम (Karl Manheim) का मत है—''मानव इतिहास की संचालक शक्ति (moving force) है, वही समस्त मूल्यों का स्रोत तथा समस्त घटनाओं का प्रारम्भकर्ता है।'' वह ऐसा तभी करता है जब वह समाज में रहता है। इस प्रकार व्यक्ति दो जगतों—व्यक्तिगत तथा सामाजिक में निवास करता है। इन दोनों प्रकार के जगतों में जीवन-यापन करने के लिए उसमें कुछ गुणों का विकास होना आवश्यक है। इन गुणों के विकास हेतु शिक्षा के सामाजिक उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है। शिक्षा के उद्देश्यों के निर्धारण के लिए समाज का आधार बनाना आवश्यक है। व्यक्ति एक सामाजिक प्राणी है। मनोवैज्ञानिक इसे सामूहिकता की मूल प्रवृत्ति के रूप में देखते हैं। समाज में व्यक्ति का जन्म होता है, समाज में उसका पालन-पोषण होता है, समाज में उसकी शिक्षा-दीक्षा होती है, समाज में रहकर उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति होती है तथा समाज में उसकी उन्नति होती है। अत: समाज की आवश्यकता, माँग, मान्यता, आदर्श, आदि को आधार बनाकर शिक्षा के उद्देश्यों का निर्धारण करना आवश्यक है तभी हम व्यक्ति को एक सामाजिक रूप से कुशल व्यक्ति बनाने में समर्थ हो सकते हैं। समाज को आधार बनाकर शिक्षा के निम्नांकित उद्देश्य बनाये जा सकते हैं—

1. सामाजिक कुशलता का विकास।
2. कुशल नागरिकता का विकास।
3. सामाजिक गुणों का विकास।
4. संस्कृति का संरक्षण एवं हस्तान्तरण।
5. अन्तर सांस्कृतिक भावना का विकास।
6. सामाजिक प्रगति।

शिक्षा के सांस्कृतिक आधार (Cultural Bases of Education)

शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण कार्य सांस्कृतिक निधि की सुरक्षा एवं उसका पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तान्तरण है। वास्तविक रूप में 'सम' और 'कृति' शब्दों के मेल से 'संस्कृति' शब्द बनता है, जिसका अर्थ है—अच्छी तरह से किया गया कार्य। इस विचार से संस्कृति के अन्तर्गत हमारे सभी उत्कृष्ट, बौद्धिक, भावात्मक एवं शारीरिक कार्य सम्मिलित किए जाते हैं। ज्ञान-विज्ञान, कला और साहित्य व्यवहार और कौशल संस्कृति को प्रकट करते हैं। 'संस्कृति किसी समाज के जीवन की सम्पूर्ण रीति है' इसलिए संस्कृति में आन्तरिक एवं बाह्य आचरणों का मेल पाया जाता है। **डॉ. राजेन्द्र प्रसाद** ने कहा था—''स्पष्ट रूप से संस्कृति में किसी समुदाय के सामूहिक उत्कृष्ट अनुभव को रखते हैं जिसका सम्बन्ध हमारे खान-पान, पहनावा, रहन-सहन के तरीके, रूढ़ियों और परम्पराओं, धर्म, साहित्य, विज्ञान, कला-कौशल, संगीत, इत्यादि तथ्यों से आदर्श रूप में होता है। शिक्षा का कार्य इन सभी का संरक्षण है। प्रत्येक पीढ़ी के सामने महत्त्वपूर्ण कार्य तथा उत्तरदायित्व रहता है कि वह इन सबकी शिक्षा नवीन पीढ़ी को दे।'' पीढ़ी-दर-पीढ़ी यह सब हस्तान्तरित हो। आज इसी कारण वेद, धर्मशास्त्र, साहित्य, विभिन्न विषयों का ज्ञान, मानवीय कृत्य, इतिहास, कला की देन हमारे सामने है। समय के अनुसार इसमें परिवर्तन एवं परिवर्द्धन भी होता रहता है।

संस्कृति की सुरक्षा तथा उसका हस्तान्तरण आज के युग में और भी आवश्यक है क्योंकि आजकल जनतन्त्र का समय है, जिसमें जनता का सब कुछ है और कुछ भी नहीं है, ऐसे में उत्तरदायित्व निभाना कठिन है इसलिए शिक्षा का यह प्रमुख कार्य है कि समाज और उसकी निधि का अस्तित्व कायम रखना। जिस देश में शिक्षा का अभाव है, वही शिक्षा संस्कृति को सुरक्षित नहीं रख सकती और देश संस्कृति-विहीन रहते हैं।

शिक्षा के आर्थिक आधार (Economic Bases of Education)

समाज की आर्थिक दशाएँ उसकी शिक्षा के स्वरूप तथा उसके उद्देश्यों के निर्धारण में महत्त्वपूर्ण भूमिकाएँ अदा करती है। प्रत्येक देश की उत्पादन की मात्रा, वितरण की पद्धति तथा आर्थिक व्यवस्था वहाँ की शिक्षा पर गहन प्रकाश डालती है। उत्पादन की मात्रा यह निश्चित करती है कि शिक्षा पर कितनी धनराशि व्यय की जानी सम्भव है ? वितरण की पद्धति आर्थिक व्यवस्था का सुसंगठन ही नहीं करती अपितु सामाजिक एकता की स्थापना भी करती है। आर्थिक व्यवस्था शिक्षा के लिए समय एवं सुविधाएं प्रदान करती है साथ ही विभिन्न प्रकार की शिक्षा के लिए अवसर प्रदान करती है। आर्थिक आधार के फलस्वरूप आज विशेषीकरण पर अधिक बल दिया गया। विशेषीकरण के फलस्वरूप विभिन्न प्रकार के कार्यों के लिए एवं प्रशिक्षण के लिए शिक्षा के उद्देश्यों को बनाया गया है।

शिक्षा के राजनीतिक आधार (Political Bases of Education)

समाज की राजनीतिक विचारधारा शिक्षा के उद्देश्यों के निर्धारण में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। किसी भी देश की शिक्षा शासक वर्ग की विशेषताओं को व्यक्त करती है। सभी प्रकार की सरकारें अपने ध्येय को प्राप्त करने के लिए शिक्षा के उद्देश्यों का निर्माण करती हैं। शिक्षा का कार्य राजनीतिक और राष्ट्रीय सुरक्षा को बनाये रखना है। शिक्षा के अभाव में सुरक्षा प्राप्त होना असम्भव है। भारत पर अंग्रेजों के लम्बे शासन काल में शिक्षा ने यह कार्य नहीं किया, यही कारण था कि हमारे देश को बड़ी कठिनाई से यह आभास हुआ कि इस प्रकार की भी कोई सुरक्षा होती है। आज भारत स्वतन्त्र है, इसे सुरक्षा की अत्यधिक आवश्यकता है। देश पर चीन और पाकिस्तान के आक्रमण हो चुके हैं और भारत की राजनैतिक तथा राष्ट्रीय सुरक्षा को बनाए रखने के लिए तैयार करना शिक्षा का ही कार्य है, इसलिए कहा गया है कि केवल शिक्षा से ही हमारी राजनीतिक सुरक्षा सम्भव है।

●

बिहार (डी.एल.एड.) के नवीनतम् पाठ्यक्रमानुसार

प्रथम वर्ष

BR001	समाज, शिक्षा और पाठ्यचर्या की समझ
BR002	बचपन और बाल विकास
BR003	प्रारम्भिक बाल्यवस्था देखभाल एवं शिक्षा
BR004	विद्यालय संस्कृति, परिवर्तन और शिक्षक विकास
BR005	भाषा की समझ तथा आरम्भिक भाषा विकास
BR006	शिक्षा में जेण्डर एवं समावेशी परिप्रेक्ष्य
BR007	गणित का शिक्षाशास्त्र–1 (प्राथमिक स्तर)
BR008	हिन्दी का शिक्षण शास्त्र–1 (प्राथमिक स्तर)
BR009	Proficiency in English
BR010	पर्यावरण अध्ययन का शिक्षणशास्त्र
BR011	कला समेकित शिक्षा
BR012	शिक्षा में सूचना एवं संचार तकनीकी

OUR ONLINE PARTNERS : - flipkart.com amazon

SHRI VINOD PUSTAK MANDIR
Dr. Rangeya Raghava Marg, Agra-2
Ph. : (0562)-2855179, 2855187
Tele Fax : (0562) 2524532
e-mail : rsainternational@rediffmail.com
www.vinodpustakmandir.in

ISBN-978-81-74572-29-5

BR001